thearyasamaj.org

ओ३म्

पाक्षिक
परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५७ अंक - २ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र जनवरी (द्वितीय) २०१५

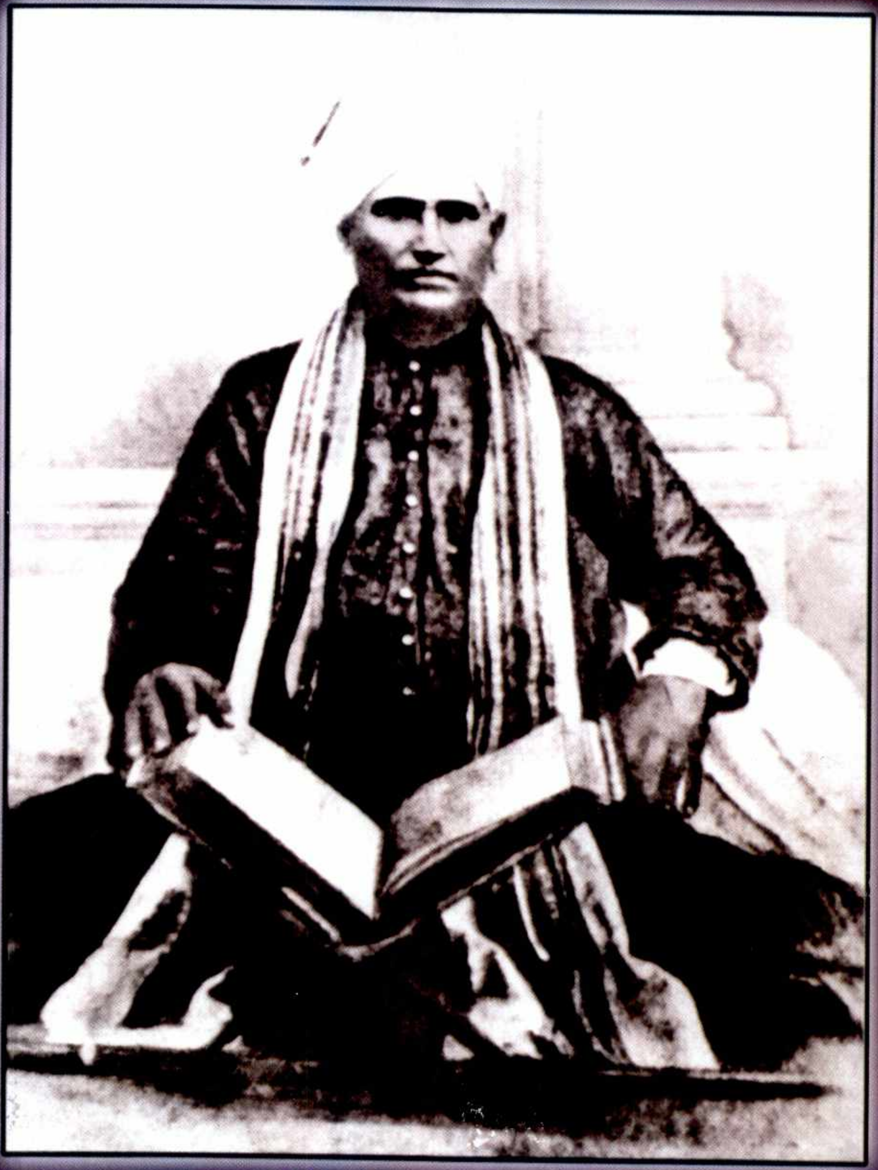

महर्षि दयानन्द सरस्वती

thearyasamaj.org

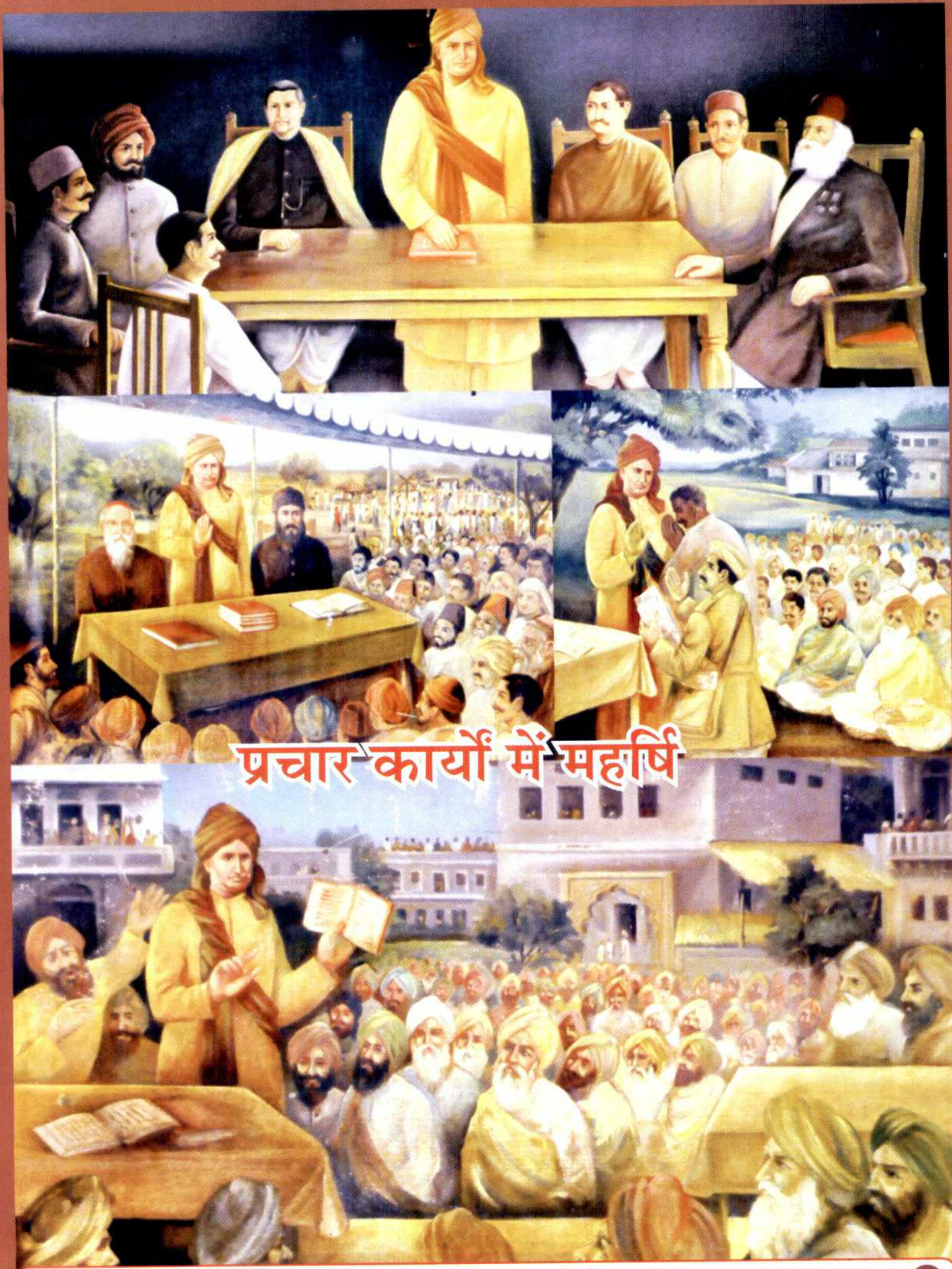

thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुख पत्र

वर्ष : ५७ अंक : २
दयानन्दाब्द: १९०
विक्रम संवत्: माघ कृष्ण, २०७१
कलि संवत्: ५११५
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११५

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-
भारत में
वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।
विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

RNI. No. ३९५९/५९

परोपकारी

जनवरी द्वितीय २०१५

अनुक्रम

१. जर्मन संस्कृत विवाद कितना उचित?	सम्पादकीय	०४
२. अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्च...	स्वामी विष्वङ्	०६
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	१२
४. हनुमान आदि बन्दर नहीं थे	इन्द्रजित् देव	१६
५. वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन		१९
६. ऊमर काव्य	ऊमरदान लालस	२१
७. पुस्तक-समीक्षा	आचार्य सोमदेव	२५
८. हमारे पारिवारिक -सत्संग	पं. जगत्कुमार शास्त्री	२८
९. वैदिक चार-धाम	महात्मा चैतन्यमुनि	३१
१०. स्तुता मया वरदा वेदमाता-२		३५
११. जिज्ञासा समाधान-७९	आचार्य सोमदेव	३६
१२. संस्था-समाचार		३९
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

thearyasamaj.org

जर्मन संस्कृत विवाद कितना उचित?

गत दिनों मोदी सरकार के एक निर्णय को लेकर समाचार-पत्रों में पक्ष-विपक्ष पर बहुत लिखा गया। सामान्य रूप से इस विवाद से ऐसा प्रतीत होता है, जैसे कोई बहुत बड़ा निर्णय मोदी ने किया है। जबकि ऐसा कुछ भी नहीं है। बात केवल इतनी सीधी थी कि पिछली सरकार ने एक अवैधानिक और अनुचित निर्णय लिया था, उसको इस सरकार ने वापस कर लिया। हाँ, इतना सच है यदि सोनिया की सरकार सत्ता में आती तो यह निर्णय नहीं लिया जाता। यह निर्णय सोनिया सरकार ने अपनी सरकार की नीति के परिप्रेक्ष्य में लिया था। इस नीति को समझने के लिए गत वर्षों के क्रियाकलाप पर दृष्टि डालना उचित होगा। इस नीति का मूल कारण था चर्च, जिसे अपने काम करने में सबसे बड़ी बाधा लगती है संस्कृत। मैकाले का मानना था कि इस देश को अपने आधीन करने के लिए इसकी जड़ों को काटना आवश्यक है। भारतीय इतिहास और संस्कृति की जड़ संस्कृत में निहित है। इस देश की जीवन पद्धति संस्कृत में रच बस गई है। प्रातःकाल से सायं और जन्म से मृत्यु तक का यहाँ का सामाजिक जीवन संस्कृत से संचालित होता है। मैकाले ने यहाँ की समझ और समृद्धि को समाप्त करने के लिए सरकार का संरक्षण देकर चर्च का प्रचार-तन्त्र खड़ा किया था। सरकार ने ऐसी नीतियाँ बनाई जिससे यहाँ के लोगों को अपने आधार से पृथक् किया जाये और ईसायत के रूप में अपने प्रति निष्ठावान् बनाया जा सके। यह प्रयास नेहरू से सोनिया गाँधी तक निरन्तर चलता आ रहा है। इसी नीति के अनुसार संस्कृत को विभिन्न पाठ्यक्रमों से धीरे-धीरे बाहर कर दिया गया। सन् २००१ में दिल्ली में हुए मानव-अधिकार सम्मेलन में चर्च के सलाहकार और मानव अधिकारवादी शिक्षक कान्ता चैलय्या ने कहा था- इस देश में हमारे लिए सबसे बड़ी रुकावट संस्कृत भाषा है और इसे हम समाप्त करना चाहते हैं। चैलय्या का कहना था- ''वी वाण्ट टू किल संस्कृत इन दिस कण्ट्री'' इसी नीति का अनुसरण करते हुए और विभागों की तरह केन्द्रीय विद्यालय के पाठ्यक्रम से भी संस्कृत को हटाया गया। पहले बड़ी कक्षाओं से हटाया फिर पूरे विषय को ही पाठ्यक्रम से समाप्त कर दिया गया। यह समाप्त करने की प्रक्रिया ही वर्तमान सरकार के निर्णय का कारण है। समाचार पत्रों में अधिकांश चर्चा बिना वस्तुस्थिति जाने की गई है, अंग्रेजी समाचार-पत्रों ने और उनके समर्थकों द्वारा मोदी सरकार के निर्णय को गलत सिद्ध करने का धूर्तता पूर्ण प्रयास किया है।

राजीव गाँधी के समय भी संस्कृत को केन्द्रीय विद्यालयों के पाठ्यक्रम से हटाने का प्रयास किया गया था, उस समय संस्कृत-प्रेमियों ने इस निर्णय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय तक लड़ाई लड़ी और सरकार के प्रयास को विफल किया। सरकार ने दूसरी चाल चलकर संस्कृत विभाग से अध्यापकों को उन्नति दे कर विभाग ही समाप्त करा दिये। शिक्षकों के अभाव में छात्रों को संस्कृत पढ़ाता कौन? संस्कृत को समाप्त कर विदेशी भाषाओं को पढ़ाने का प्रावधान सोनिया गाँधी के समय किया गया। उस समय के मानव संसाधन मन्त्रालय के मन्त्री कपिल सिब्बल ने जर्मनी के साथ समझौता किया, जिसके क्रियान्वयन के लिए केन्द्रीय विद्यालय संगठन ने ५ जनवरी २०११ को एक परिपत्र जारी किया। जिसके चलते २०११-२०१२ के सत्र से कक्षा ६ से ८ तक तीसरी भाषा के रूप में संस्कृत के स्थान पर जर्मन, फ्रेन्च, चीनी, स्पेनिश जैसी विदेशी भाषायें पढ़ाने के निर्देश दिये गये। जो शिक्षक संस्कृत अध्यापन का कार्य करते थे उन्हें इन भाषाओं का प्रशिक्षण लेने के लिए कहा गया जिससे इन अध्यापकों को इन भाषाओं को पढ़ाने की योग्यता प्राप्त हो सके। यह निर्देश अवैधानिक होने के साथ-साथ अनुचित भी था। जिस व्यक्ति ने जीवन का लम्बा समय जिस भाषा को सीखने और सिखाने में लगाया है उसके इस पुरुषार्थ और योग्यता को नष्ट करना व्यक्ति के साथ तो यह अन्याय है ही इसके साथ ही राष्ट्र की शैक्षणिक और भौतिक सम्पदा को नष्ट करने का अपराध भी है। परन्तु सरकार किसी बात को करने की ठान ले तो फिर उचित-अनुचित के विचार का प्रश्न ही कहाँ उठता है। इस प्रकार संस्कृत को पाठ्यक्रम से बाहर कर दिया गया और उसके स्थान पर जर्मन पढ़ाना प्रारम्भ हो गया।

यह निर्देश संस्कृत भाषा और संस्कृति के नाश का कारण तो था ही साथ ही साथ यह एक अवैध कदम भी था। असंवैधानिक होने के साथ-साथ सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध भी था। संविधान के अनुच्छेद ३४३(१) में कहा गया है कि आधिकारिक भाषा देवनागरी लिपि में हिन्दी भाषा होगी। संविधान के अनुच्छेद ३५१ में कहा

thearyasamaj.org

गया है- हिन्दी के विकास करने के लिए आवश्यकता होने पर प्राथमिक रूप से संस्कृत और बाद में अन्य भाषाओं से शब्द लिए जायें। संविधान में यह भी कहा गया है- भारत सरकार संविधान की आठवीं अनुसूची में उल्लिखित भाषाओं के विकास के लिए प्रयास करेगी। इसमें किसी भी विदेशी भाषा का उल्लेख नहीं किया गया है अत: संस्कृत को हटाकर जर्मन पढ़ाने का निर्णय किसी भी दशा में उचित नहीं कहा जा सकता। केन्द्रीय विद्यालयों की नियमावली के अनुसार भी यह निर्देश अनुचित है। नियमावली के अध्याय १३ के अनुच्छेद १०८ में कहा गया है कि केन्द्रीय विद्यालयों में जो तीन भाषायें पढ़ाई जायेंगी वे हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत होंगी। इसी प्रकार राष्ट्रीय विद्यालय शिक्षा नीति के प्रावधानों के भी यह विरुद्ध है- नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर स्कूल एजुकेशन में जो त्रिभाषा सूत्र २-८-५ में कहा गया है, इस त्रिभाषा सूत्र में किसी विदेशी भाषा का समायोजन नहीं किया जा सकेगा। इस प्रकार किसी रूप में सोनिया सरकार द्वारा जारी किये गये परिपत्र को उचित ठहराया नहीं जा सकता। ऐसे परिपत्र के निर्देश को मोदी सरकार हटाती है तो यह कार्य कैसे प्रतिगामी कदम कहा जा सकता है। सरकार के निर्णय द्वारा केवल पुरानी गलती को सुधारा गया है। जब सोनिया सरकार ने संस्कृत हटाने का परिपत्र प्रकाशित किया तब २८ अप्रैल २०१३ को दिल्ली उच्च न्यायालय में इसके विरोध में एक जनहित याचिका दायर की गई थी, जब सरकार के निर्णय पर तथाकथित प्रगतिवादियों ने शोर मचाया तो सरकार ने न्यायालय में शपथ पत्र देकर अपने पुराने निर्णय को वापस ले लिया। नवम्बर २०१४ में शपथ पत्र दायर कर सोनिया सरकार द्वारा जारी पत्र को वापस ले लिया। साथ ही मोदी सरकार ने सितम्बर २०१४ में गोआ इंस्टीट्यूट, मैक्समूलर भवन के साथ संस्कृत के स्थान पर जर्मन पढ़ाने के समझौते की जाँच के आदेश भी दे दिये तथा समझौते का नवीनीकरण भी नहीं किया गया। जहाँ तक सत्र के मध्य में पाठ्यक्रम बदलने की बात है यह आपत्ति इसलिए निराधार है क्योंकि ८वीं कक्षा तक परीक्षा नहीं होती। छात्रों को बिना परीक्षा के उत्तीर्ण किया जाता है। अत: छात्र के परीक्षा परिणाम पर किसी प्रकार का प्रभाव पड़ने वाला नहीं है।

यह एक बहुत सामान्य बात थी कि एक असंवैधानिक निर्देश से संस्कृत को पाठ्यक्रम से बाहर कर दिया गया था, उस निर्देश को सरकार ने वापस ले लिया। इसमें कैसे जर्मन हटाई गई और किसने संस्कृत थोपी, सब कुछ केवल शोर मचाने के लिए है। अंग्रेजी समाचार-पत्रों ने संस्कृत थोपे जाने का जोर-शोर से विरोध किया। अंग्रेजी की महत्ता में बड़े-बड़े लेख लिखे गये। पिछलग्गू हिन्दी समाचार पत्रों ने संस्कृत की महत्ता पूजा-पाठ के लिए बताते हुए किसी पर भाषा थोपने का विरोध किया। जो तथ्यों से परिचित थे उन्होंने इन तथाकथित प्रगतिशील लोगों का मुँहतोड़ जवाब दिया। तथ्य व वास्तविकता को जनता के सामने रखा। ऐसे धर्मध्वजी लोगों का उत्तर देना आवश्यक भी है। जो लोग संस्कृत थोपने की बात करते हैं यदि उनमें यदि थोड़ी भी नैतिकता होती तो जिस दिन संस्कृत हटाने का परिपत्र प्रकाशित हुआ उन्हें उसका विरोध करना चाहिए था। इन लोगों ने उस दिन मनमोहन सिंह को बधाई दी, लम्बे-लम्बे सम्पादकीय लिखे थे जब एक असंवैधानिक निर्णय सरकार ने किया था जिसमें हिन्दी के विकास के लिए संस्कृत से शब्दों के ग्रहण करने का प्रावधान हटाकर हिन्दी में उर्दू और अंग्रेजी शब्दों की भरमार कर दी थी। जिस मूर्खता को सारे समाचार दिखाने वाले और छापने वाले समाचार पत्र बड़े गर्व से आज भी प्रस्तुत कर रहे हैं।

सोनिया सरकार की कार्य सूची में हिन्दू को समाप्त करने के लिए हिन्दी और संस्कृत को समाप्त करने का प्रस्ताव कार्य सूची में बहुत ऊपर था। आज ऐसे लोग हिन्दी में न केवल अंग्रेजी, उर्दू शब्द अनावश्यक रूप से भाषा में घुसाते हैं अपितु उन्हें रोमन में लिखकर हिन्दी भाषियों को अंग्रेजी सिखाने का भी काम कर रहे हैं। इस देश पर अंग्रेज शासक था उसका अंग्रेजी थोपना समझ में आता है परन्तु स्वतन्त्रता के बाद अंग्रेजी प्रशासन, विधान मण्डल, शिक्षा, न्याय की भाषा बनना यह सबसे बड़ा थोपना है। अंग्रेजी भाषा एक विषय के रूप में पढ़ाई जा सकती है परन्तु इस देश का दुर्भाग्य यह है कि यह हमारी शिक्षा का माध्यम बना दी गई है। हम आज स्वतन्त्र होकर भी अंग्रेजी के ही आधीन हैं। क्या पराधीनता से मुक्त करने का प्रयास करना थोपना कहा जायेगा, संस्कृत को मृत भाषा या संस्कृत को देवी-देवताओं की स्तुति भाषा बताकर उसके महत्त्व को कम करना नहीं है। जो भाषा इस देश पर दो सौ वर्षों से थोपी जा रही है उसका विरोध तो किया नहीं, संस्कृत के विरोध का बहाना कर लिया। वेद में भाषा के महत्त्व को रेखांकित करते हुए वेदवाणी को राष्ट्र में ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाली कहा है-

अहं राष्ट्री संगमनी वसूनाम्।

- धर्मवीर

thearyasamaj.org

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः-३

- स्वामी विष्वङ्

साधन पाद के पहले सूत्र में क्रियायोग की चर्चा की गई है। क्रियायोग का प्रयोजन बताते हुए महर्षि ने दूसरे (**समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च**) सूत्र में स्पष्ट किया है कि क्रियायोग करने से समाधि लग जाती है और क्लेश कमजोर हो जाते हैं। दूसरे सूत्र में क्लेशों के तनू (कमजोर) होने की बात कही गई है, तो प्रश्न उपस्थित होता है कि क्लेश क्या है? क्लेशों को कमजोर करने के लिए साधक तब प्रवृत्त होगा जब उसे पता लगे कि क्लेश क्या है? और क्लेशों को कमजोर क्यों करना है? प्रस्तुत सूत्र की व्याख्या करने से पहले महर्षि वेदव्यास ने भी इसी बात को लेकर भूमिका के रूप में प्रश्न उपस्थित किया है कि-

अथ के ते क्लेशाः? कियन्तो वेति?

अर्थात् आपने दूसरे सूत्र में क्लेशों को कमजोर करने की बात कही है, तो वे क्लेश कौन से हैं जिनको कमजोर करना है और वे क्लेश कितने हैं? इस प्रश्न का समाधान महर्षि पतञ्जलि ने सूत्र रूप में दिया है

अविद्या-अस्मिता-राग-द्वेष-अभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः

अर्थात् अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश के रूप में पाञ्च क्लेश होते हैं।

क्लेश शब्द से पाञ्चों विभागों का ग्रहण हो जाता है। पाञ्चों विभागों को एक शब्द (क्लेश) से कथन किया है। इसलिए 'क्लेश' कहने मात्र से पाञ्चों विभागों का ग्रहण हो जाता है। क्लेश शब्द का पर्यायवाचि (समान अर्थ को कहने वाला) शब्द 'अविद्या' भी है। जिसप्रकार क्लेश कहने से पाञ्चों विभागों का ग्रहण होता है उसी प्रकार अविद्या कहने से अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश इन पाञ्चों का ग्रहण हो जाता है। यहाँ क्लेश शब्द का जो पर्यायवाची शब्द अविद्या है, उसे मिथ्याज्ञान भी कहा जाता है। मिथ्याज्ञान अर्थात् अविद्या। जिसप्रकार क्लेशत्व (क्लेशपन) सभी प्रकारों में रहता है उसीप्रकार अविद्यापन भी सभी प्रकारों में रहता है। हाँ, महर्षि पतञ्जलि ने मिथ्याज्ञान के पाञ्चों प्रकारों का नामकरण करते हुए पहले प्रकार का नाम भी अविद्या रखा और पाञ्चों प्रकारों का सामूहिक नाम भी अविद्या है। केवल इतना अन्तर है कि जब क्लेश शब्द के स्थान पर अविद्या शब्द का प्रयोग किया जाता है तब अविद्या शब्द समूह को कहने के लिए आता है और जब अविद्या शब्द एक विभाग के अर्थ में आता है तब अविद्या शब्द समूह को कहने के लिए नहीं होता। इसीलिए महर्षि पतञ्जलि ने अविद्या रूप विभाग की अलग से परिभाषा सूत्र के रूप में की है। अविद्या विभाग वाले सूत्र का क्रम आने पर उसकी व्याख्या वहीं पर की जायेगी।

महर्षि वेदव्यास प्रस्तुत सूत्र की व्याख्या करते हुए लिखते हैं-

क्लेशा इति पञ्च विपर्यया इत्यर्थः।

अर्थात् क्लेश का अभिप्राय है- पाञ्च प्रकार के विपर्यय ज्ञान हैं, ऐसा समझना चाहिए। यहाँ विपर्यय का अर्थ विपरीत ज्ञान से है। विपरीत का अभिप्राय उल्टा ज्ञान है। महर्षि पतञ्जलि ने समाधि पाद के आठवें सूत्र (**विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम्**) में स्पष्ट किया है। मिथ्या (उल्टा) ज्ञान को विपर्यय कहा है। उसे विपर्यय इसलिए कहा जाता है कि जो वस्तु जिस रूप में होती है उस वस्तु को विपरीत (उल्टा) जाना जाता है। इसलिए उसे विपर्यय ज्ञान कहते हैं। क्लेश कहो या विपर्यय कहो या मिथ्या ज्ञान कहो अथवा अविद्या कहो ये चारों शब्द एक ही अर्थ को बताने वाले हैं और ये चारों शब्द समूह को संकेत करते हैं। जब ये समूह अर्थ के लिए आते हैं तब पाञ्चों विभागों का ग्रहण होता है जब राग के लिए कहा जाता है कि राग-क्लेश है तब यहाँ क्लेशपन राग में है इसलिए राग को क्लेश कहा जाता है, ऐसा समझना चाहिए।

ये पाञ्चों क्लेश मनुष्य के मन में रहते हुए क्या करते हैं इस बात को स्पष्ट करते हुए महर्षि वेदव्यास कहते हैं-

ते स्पन्दमाना गुणाधिकारं दृढयन्ति।

अर्थात् वे पाञ्चों क्लेश व्यवहार में आते हुए गुणों के अधिकार को दृढ़ करते हैं। मनुष्य प्रातःकाल उठकर व्यवहार करना प्रारम्भ करता है तब से लेकर निद्रा काल तक जो भी क्रियाएँ करता है, वे क्रियाएँ क्लेशों से युक्त रहती हैं। बिना क्लेशयुक्त व्यवहार नहीं कर पाता है। इसलिए ऋषि ने '**स्पन्दमानाः**' शब्द का प्रयोग किया है। ये पाञ्चों क्लेश गुणों के अधिकार को दृढ़ करते हैं। यहाँ गुण शब्द तत्त्व (पदार्थ) वाचि है। महर्षि पतञ्जलि और व्याख्याकार महर्षि

thearyasamaj.org

वेदव्यास ने 'गुण' शब्द को पदार्थ के अर्थ में ग्रहण किया है। इसलिए यहाँ गुण शब्द से 'सत्त्व, रज, तम' इन तीनों पदार्थों का ग्रहण किया है। गुणाधिकार का अभिप्राय है- गुणों का कार्य। सत्त्व, रज, तम रूप तीनों गुणों का कार्य है- जीवात्मा को संसार का भोग कराना और अपवर्ग (मोक्ष) दिलाना। जब तक ये दोनों कार्य पूरे नहीं होते हैं तब तक आत्मा शरीर धारण करता रहता है। यहाँ कहा जा रहा है कि ये पाञ्चों क्लेश व्यवहार में आते हुए सत्त्व, रज, तम के अधिकार रूप भोग और अपवर्ग को बनाये रखते हैं।

मनुष्य जब तक क्लेशों से युक्त होकर कर्म करता रहता है तब तक धर्माधर्म (अदृष्ट) बनता रहेगा। धर्माधर्म का अभिप्राय है फल देने वाले संस्कार जो आत्मा को फल प्रदान करते हैं। कर्म तो करते ही समाप्त होते हैं क्योंकि कर्म एक क्रिया है, जो करते समय होती है, करने के बाद नहीं रहती है। क्रिया तो नष्ट हो गई पर उस क्रिया का संस्कार मन पर बना रहता है। उसी संस्कार को धर्माधर्म या अदृष्ट के नाम से कथन किया जाता है। इसलिए क्लेशों से युक्त होकर कर्म करते रहने से अदृष्ट बनता रहता है और वही अदृष्ट आत्मा को फल प्रदान करने वाला है। जबतक अदृष्ट बना रहेगा तब तक आत्मा को फल प्रदान करने के लिए सत्त्व, रज, तम को भोग व अपवर्ग दिलाने के लिए कार्यजगत् के रूप में बना रहना होगा। इसलिए ऋषि ने कहा है कि वे पाञ्चों क्लेश गुणों के अधिकार को बनाये रखते हैं। योग साधक को यह समझ लेना चाहिये कि जब तब गुणों का अधिकार बना रहेगा तब तक जन्म-मरण रूपी संसार चक्र से छुटकारा नहीं मिलेगा। यदि संसार चक्र से छूटना चाहते हैं, तो क्रियायोग को जीवन में उतारना होगा। तभी क्लेशों को कमजोर बना कर विवेक वैराग्य को प्राप्त कर क्लेशों को नष्ट किया जा सकता है।

जहाँ क्लेश गुणों के अधिकार को दृढ़ करते हैं वहाँ **'परिणाममवस्थापयन्ति।'** अर्थात् पाञ्चों क्लेश व्यवहार में आते हुए **'परिणाम'** को बनाए रखते हैं। यहाँ परिणाम का अभिप्राय है **'कार्य'** अर्थात् सत्त्व, रज, तम का परिणाम (कार्य) महतत्त्व रूपी बुद्धि, अहंकार, मन, पाञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ, पाञ्च कर्मेन्द्रियाँ, पाञ्च तन्मात्राएँ, पाञ्च महाभूत है। महाभूतों से बना दृष्टिगोचर में आने वाला यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड। इन सबको परिणाम शब्द से कहा गया है। इसप्रकार पाञ्चों क्लेश सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को चालू रखते हैं- बनाये रखते हैं।

महर्षि वेदव्यास आगे लिखते हैं- **'कार्यकारणस्रोत उन्नमयन्ति।'** अर्थात् कार्य और कारण के प्रवाह को प्रकट करते हैं। अभिप्राय यह है कि सत्त्व, रज, तम उपादान कारण रूप में हैं और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कार्य रूप में है। इस, कारण व कार्य रूप प्रवाह को क्लेश बनाये रखते हैं। अर्थात् क्लेश सत्त्व, रज, तम को विवश करते हैं कि वे कारण बन कर महतत्त्व, अहंकार, मन, इन्द्रियों, तन्मात्राओं, पञ्चभूतों और दृष्टिगोचर में आने वाले पदार्थों को उत्पन्न करें। यह ही कार्यकारण स्रोत को प्रकट करने का अभिप्राय है।

क्लेशों के महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध को बताते हुए ऋषि लिखते हैं-

परस्परानुग्रहतन्त्रीभूय कर्मविपाकं चाभिनिर्हरन्तीति।

अर्थात् ये पाञ्चों क्लेश परस्पर- एक दूसरे के साथ मिलकर अपना-अपना कार्य करते हुए मनुष्य के द्वारा किये गये कर्मों के फल को प्रकट करते हैं। महर्षि ने क्लेशों को परस्पर अनुग्रह करने वाले बताया है। इसका अभिप्राय यह है कि अविद्या के कारण अस्मिता उत्पन्न होती है और अस्मिता के कारण अविद्या उत्पन्न होती है। इसीप्रकार अविद्या से राग और राग से अविद्या, अविद्या से द्वेष और द्वेष से अविद्या, अविद्या से अभिनिवेश और अभिनिवेश से अविद्या। यहाँ कोई भी क्लेश किसी से भी उत्पन्न हो सकता है। ऐसा कोई नियम नहीं है कि अविद्या से राग और राग से अविद्या ही उत्पन्न होगी बल्कि राग से द्वेष या अस्मिता या अभिनिवेश भी उत्पन्न होंगे। कोई भी किसी से भी उत्पन्न हो सकता है। कौनसा क्लेश किससे उत्पन्न होगा? यह परिस्थिति के अनुसार निर्भर करता है। कब किस व्यक्ति का कैसा ज्ञान है? क्या समय है? क्या सम्बन्ध है? इत्यादि अनेक कारणों से क्लेशों का उत्पन्न होना निर्भर करता है। इसलिए ये पाञ्चों क्लेश परस्पर एकीभूत होकर संगठित रूप में रहते हुए मनुष्य को कर्मों में प्रवृत्त करते रहते हैं। इस प्रकार मनुष्य क्लेशों के कारण नाना प्रकार के कर्मों को करता हुआ सुख-दुःख रूपी फलों को भोगने के लिए बार-बार जन्म-मरण को प्राप्त होता रहता है। इस जन्म-मरण रूपी चक्र को समाप्त करने के लिए क्रियायोग को अपना कर क्लेशों को कमजोर करके तत्त्वज्ञान रूपी अग्नि से क्लेशों को दग्ध करना चाहिए। जिससे जन्म-मरण रूपी चक्र से छूट सके।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

thearyasamaj.org

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (प्राथमिक व द्वितीय स्तर)

दिनांक : १४ से २१ जून, २०१५

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों–बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।

१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ

thearyasamaj.org
में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

(: मार्ग :)

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क** के रूप में अतिरिक्त जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

मनुष्यों को उचित है कि परमेश्वर में ही मन बुद्धि को युक्त कर विद्वानों के सङ्ग से विद्या को पा सुखी हो अन्य मनुष्यों को भी इसी प्रकार आनन्दित करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.१४

जैसे विद्वान् लोग ईश्वर की सृष्टि में विद्या से पदार्थों की परीक्षा करके कार्य्यों में उपयोग कर सुखों को प्राप्त करते हैं वैसे ही सब मनुष्यों को इस यज्ञ का अनुष्ठान कर सब सुखों को पहुँचाना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२२

thearyasamaj.org

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। ये ध्यान-प्रशिक्षक आपके जनपद के निकट भी उपलब्ध हो सकते हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़ कर ये प्रवचन नि:शुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़ कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिख कर सर्च करें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

thearyasamaj.org

।।ओ३म्।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) के दो शिविर लगाये जा चुके हैं। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

thearyasamaj.org

कुछ तड़प-कुछ झड़प

- राजेन्द्र जिज्ञासु

इतिहासकार श्री ईश्वरीप्रसाद का ज्ञान प्रसाद:- पंजाब यात्रा की हमारी एक विशेष उपलब्धि यह रही कि देश के एक जाने माने गम्भीर इतिहासकार डॉ. ईश्वरीप्रसाद का एक महत्त्वपूर्ण लेख हाथ लगा। डॉ. ईश्वरीप्रसाद ने अपने इस लेख में ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज की देन व महत्त्व पर खुलकर कुछ लिखा है। उनका ऐसा दूसरा लेख मेरे पढ़ने में तो आया नहीं। आपने अपने इस लेख में जनजागरण तथा देश जाति की रक्षा का सर्वाधिक श्रेय ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज को ही दिया है। मेरी इच्छा है कि आर्यसमाज अगले लम्बे अवतरण का अधिक से अधिक प्रचार करे।

''सन् १८७५ ईस्वी में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की, उन्होंने तत्कालीन हिन्दू धर्म की बड़ी आलोचना की, मूर्तिपूजा का विरोध किया, सामाजिक दोषों की निन्दा की और वैदिक धर्म पालन करने का आदेश किया। आर्यसमाज के सिद्धान्तों का यहाँ उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। इस लेख के उद्देश्य की दृष्टि से इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि **हिन्दू समाज में स्वामी जी ने एक हलचल मचा दी। अदम्य निर्भीकता के साथ उन्होंने स्वेच्छाचारी, निरंकुश 'पोपों' का सामना किया और काशी के प्रसिद्ध शास्त्रार्थ में अपनी विद्वत्ता का सिक्का जमा दिया।** स्वामी जी के विचारों का देश में वही असर हुआ जो बम्ब-गोले के गिरने का किसी शान्त सभा में हो। आर्यसमाज के विस्तृत कार्यक्रम में हिन्दू-जाति की मृत हड्डियों में फिर से जान डाल दी। यह सब सामाजिक उथल-पुथल थी। **राष्ट्रीय आन्दोलन का अभी नामो-निशान नहीं था। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध किसी को ताब न थी कि जबान निकाले।** आज कल के युवकों के लिए उस परिस्थिति का समझना दुस्तर है।''

विचारिये- कोई प्रमाण?:- चाँद के मारवाड़ अंक में महर्षि दयानन्द के विषपान सम्बन्धी लेख की पहली बार चर्चा इसी सेवक ने आर्य पत्रों व साहित्य में की फिर और महानुभाव भी उस विशेषाङ्क के बारे में हमसे जानकारी माँगते रहे। उस लेख में कवि चन्दबरदाई के वंशज पं. ब्रह्मभट्ट ने ऋषि के विषपान, वेश्या नन्ही भगतन के कुकृत्य पर प्रकाश डाला है। ऋषि की जोधपुर की दिनचर्या पर भी कुछ जानकारी दी। यही लेख प्रसिद्ध हिन्दी मासिक सरस्वती के नवम्बर १९२९ के अंक में श्री रमाकान्त त्रिपाठी ने दिया है। लेख तो महत्त्वपूर्ण है परन्तु हमारा मत है कि इसमें भी प्रक्षेप किया गया है।

प्रक्षेप रमाकान्त जी ने किया या नेनूराम जी ब्रह्मभट्ट ने, यह कहना तो कठिन है। सरस्वती की यह फाईल अब परोपकारिणी सभा की सम्पत्ति है। इसे पूरी जाँच कर सभा को सौंप दूँगा।

इस लेख में श्री नेनूराम ने ऋषि की जोधपुर की दिनचर्या आदि के बारे जो कुछ बताया है सो तो ठीक है परन्तु एक बात जो पं. नेनूराम के विषय में जो लिखी गई है, वह नहीं जँचती। उस पर बिना जाँच-परख व बिना विचारे विश्वास नहीं किया जा सकता। आर्य जनता को सावधान करते हुए यह तथ्य यहाँ रखा जाता है कि महर्षि की जोधपुर से आबू तथा आबू से जोधपुर यात्रा के समय किसी भी तत्कालीन स्रोत से इस बात की पुष्टि नहीं होती कि पं. नेनूराम जी महर्षि के साथ आबू से अजमेर तक आए। दीवान हरबिलास जी के ग्रन्थ व किसी लेख में इस बात का उल्लेख नहीं है। 'आर्य समाचार' मेरठ का उस समय का ऐतिहासिक अंक महर्षि के अन्तिम एक मास का सविस्तार वर्णन करता है। उसे हमने बार-बार पढ़ा है। उसमें नेनूराम जी का नाम ही नहीं और भी तत्कालीन किसी भी पत्र में उनके आबू से अजमेर आने का कोई प्रमाण नहीं मिलता।

पं. लेखराम जी और देवेन्द्र बाबू जी ने जोधपुर में सघन खोज की। पं. नेनूराम जैसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति और इतिहासकार के अजमेर आने का, उन दोनों को पता ही नहीं चला। इससे कुछ शंका होती है। हमारा कोई पूर्वाग्रह नहीं है यदि किसी के पास रमाकान्त त्रिपाठी के इस कथन की पुष्टि में कोई प्रमाण हो तो सामने लाना चाहिये अन्यथा ऋषि जीवन में इस प्रक्षेप का पाप नहीं करना चाहिए। पंजाब के मेहता राधाकिशन ऋषि के काल के अनुभवी लेखक थे। आपके ग्रन्थ में भी नेनूराम जी का नाम नहीं मिलता। मेहता जी का ग्रन्थ नेनूराम के जीवनकाल में सन् १९२६ में छपा था। स्वामी सत्यानन्द जी ने घूम-घूम कर पर्याप्त नई खोज की। आपने भी नेनूराम जी के इस यात्रा में साथ होने का उल्लेख नहीं किया। कोई जोधपुर का निवासी है इस कारण उसे महर्षि की यात्रा में साथ जोड़ देना-यह

thearyasamaj.org

कोई इतिहास शास्त्र नहीं।

यह बताना भी उपयोगी होगा कि सरस्वती के इस लेख की कई बातों पर उन दिनों पत्रों में बड़ा विवाद होता रहा आवश्यकता पड़ी तो हम इस विषय पर फिर कुछ लिखेंगे। इतिहासकार गौरीशंकर ओझा जी ने भी तो जोधपुर राजस्थान के इस प्रसिद्ध इतिहासज्ञ का महर्षि की आबू से अजमेर यात्रा में साथ होने की चर्चा नहीं की है। कविराजा श्यामलदास जी ने भी ऐसा नहीं लिखा। इतिहास प्रदूषण रोकने के लिए और ऋषि जीवन में प्रक्षेप न हो- हमने इस उद्देश्य से इस विषय पर यह पंक्तियाँ लिखी है। इतिहास प्रेमी इस पर विचार करें। हवा में लाठियाँ घुमाना ठीक नहीं। कोई प्रामाणिक बात ही लिखी व कही जावे।

आपका अखाड़ा कहाँ है?:- जलियाँवाला बाग अमृतसर में हमने साधुवेश में कई युवकों को देखा। मैंने दो चार से पूछा, "महाराज! आपका अखाड़ा-आश्रम कहाँ है?" जिससे भी यह प्रश्न पूछता वह मेरा मुँह ताकने लग जाता। वह कहते हमारे वस्त्र भगवे हैं परन्तु हम साधु नहीं हैं। आचार्य सोमदेव जी ने बताया यह गृहस्थी कांवडिये हैं। यह एक नई कुरीति है। इस पर हिन्दू सन्त, बाबे और सब जगद्‌गुरु चुप्पी साधे बैठे हैं। सारी मर्यादायें रौंदी जा रही हैं। क्या हिन्दू समाज को दिशा भ्रष्ट होने से बचाने वाला कोई नहीं? धर्म-प्रचार के लिए कुछ योजना नहीं? गायत्री, वेद, उपनिषद् दर्शन, नीति ग्रन्थों का प्रचार कोई नहीं करता? गायत्री मन्त्र के अर्थ तक कोई बताने वाला विराट् संगठन नहीं। यह नियमों की सार्वभौमिक कल्याणकारी, असाम्प्रदायिक, सर्वहितकारी वैज्ञानिक विचारधारा के प्रसार में विश्व हिन्दूपरिषद् अपनी शक्ति लगा देती तो हिन्दुओं में जागृति आती। अन्य मतावलम्बी भी प्रभावित होते। मेल मिलाप बढ़ता। दिल्ली से विधर्मियों ने श्री कृष्ण जी के पुनर्जन्म सिद्धान्त के खण्डन में विशेषाङ्क निकाला। काशी नगरी से ऐसा पुष्कल साहित्य छपा। हिन्दू जाति का दुर्भाग्य कि विश्वहिन्दू परिषद् इस दुष्प्रचार का प्रतिवाद न कर सका। परोपकारी हिन्दू जाति की पुकार सुनकर कृष्ण जी की लाज बचाने आगे आया। युक्ति तर्क व प्रमाणों से सबके उत्तर देकर विरोधियों के मुँह बन्द किये।

स्वामी विवेकानन्द के नाम की तोता रटन लगाने वाले कांवडियों के अन्धविश्वास में भागीदार बन रहे हैं। सड़कों पर जाम लगने से दंगे व दुर्घटनायें होती हैं। हिन्दू कांवडियें हर वर्ष झगड़ों व दुर्घटनाओं से मरते हैं। हम अश्रुपात करते रहते हैं। ये तथाकथित हिन्दू संगठन व कुछ टी.वी. मारका बाबे इस अन्धविश्वास को फैलाते व बढ़ाते हैं। क्या श्री अरविन्द घोष, श्री रमण महाराज, स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, लोकमान्य तिलक भी काँवड़ियें बनकर हरिद्वार आये गये थे। क्या गुरु गोलवलकर, डॉ. हैडगवार, राजू भैया जी हिन्दू नहीं थे। वे काँवडियें बनते क्यों न देखे गये?

आन्धी हो, वर्षा हो अथवा बाढ़ और भूकम्प आये अदूरदर्शी हिन्दू संगठन नदी, नालों, पर्वत शिखरों की यात्रा को धार्मिकता का प्रमाण-पत्र मानकर यात्रियों को दुर्घटनाओं के मुँह में धकेलते हैं। आत्म शुद्धि, सत्कर्मों व सदुपदेश के बिना जाति का उत्थान व कल्याण न होगा। अन्धविश्वास की ये दुकानें कब तक चलेंगी? देशभर के हिन्दुओं में कबर पूजा बढ़ रही है। मुर्दाघरों में भीड़ है। तुम्हारे प्रवचनों में वह भीड़ कहाँ? एकेश्वरवाद की जड़ों पर विश्वहिन्दू परिषद् कुल्हाड़ा चलाने का काम कर रही है, वेदोपनिषद् के **'ईशावास्यामिदम्'** का मर्म जन-जन तक पहुँचाया जाता तो हिन्दुओं का सिर ऊँचा हो सकता था। प्रधानमन्त्री मोदी के घोष कि ईश्वर एक है का नये-पुराने अनेक भगवानों के ये प्रचारक उपहास उड़ाने में लगे हैं। मोदी जी के किये कराये पर न्यारे-न्यारे भगवानों, अपने-अपने अमरनाथ, बद्रीनाथ, वैद्यनाथ के पूजक पानी फेरने में लगे हैं। युवा वर्ग उठे, जागे और क्रान्ति करे।

मार्ग एक ही है:- राजनेताओं का एक वर्ग हिन्दुओं को बहकाने के लिए यह सस्ता विचार परोसता चला आ रहा है कि सब मत पन्थ ईश्वर तक ले जाते हैं। वैदिक धर्म ईश्वर को सर्वव्यापक मानता है। वह प्रभु दूर से दूर है, निकट से निकट है। वह हमारे भीतर है और हम उसके भीतर हैं। वह हमसे दूर नहीं, हम उससे दूर नहीं। दूरी तो अज्ञान के, दुष्कर्मों के कारण है। यम-नियमों का पालन जो कोई भी करेगा, वह धर्मात्मा-पुण्यात्मा बनकर ईश्वर को प्राप्त करेगा। इसमें मत, पन्थ, देश-प्रदेश का भेद नहीं। ईश्वर किसी स्थान विशेष या एक विशेष बिन्दु पर होता तो सब रास्तों से उस तक पहुँचने का कुछ अर्थ भी होता। परमात्मा तो कण-कण में है, हर तन में, हर मन में है, हर जन में है- उसतक पहुँचने के लिये सड़क मार्ग, जल मार्ग, वायु मार्ग जैसे मार्गों का प्रश्न ही नहीं उठता। यह सारा शब्द जाल है। इस जाल में हिन्दू लीडर ही हिन्दुओं को फंसाते हैं। किसी मुसलमान, ईसाई ने यह निरर्थक उपदेश कभी नहीं दिया।

thearyasamaj.org

प्रमाण लीजिये-जितने चाहें ले लें:- अभी इन्हीं दिनों आर्य अनाथालय फीरोजपुर छावनी में उसकी स्थूलकाय रिर्पोट में लिखित व मौखिक यह जानकारी पाकर लेखक दंग रह गया कि अनाथालय में सन् १९३० में कन्याओं का स्कूल खोला गया। इसे भूल बताने पर कई मित्रों ने हमसे प्रमाण मांगे हैं कि पूरे-पूरे स्पष्ट प्रमाण दीजिये कि अनाथालय में ऋषि जी के जीवन काल में ही कन्याओं की शिक्षा की व्यवस्था थी।

१. सन् १८८३ की इस संस्था की रिर्पोट इस समय सामने है। इसके के पृष्ठ ४, ५, ६ पर कन्याओं की परीक्षा लेने तथा महाराणा सज्जनसिंह जी, प्रधान परोपकारिणी सभा द्वारा इनके लिए सात सौ रुपये के दान का उल्लेख है। **आठ मार्च सन् १८८३** को लाहौर क्षेत्र के स्कूलों के निरीक्षक ने परीक्षा ली। इस रिर्पोट में ऐसे और भी तथ्य हैं। ये सब तथ्य ऋषि के जीवन काल के हैं।

२. जिस संस्कृतज्ञ पं. भानुदत्त लाहौर का नाम ऋषि जीवन में हम पढ़ते हैं । आपने तीन अगस्त सन् १८८५ को इस अनाथालय का निरीक्षण किया, आपने भी कन्याओं की शिक्षा व्यवस्था की सन् १८८५ की रिर्पोट के पृष्ठ १६ पर भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

३. सन् १८८३ की वार्षिक रिर्पोट के पृष्ठ ३९ पर डी.ए.वी. स्कूल के तत्कालीन मुख्याध्यापक हंसराज जी के इस अनाथालय के कन्या स्कूल विषयक कथन (टिप्पणी) छपी मिलती है। श्रीमान् लाला हंसराज ने दो अगस्त को स्कूल का निरीक्षण किया। अनाथालय की मोटी रिर्पोट में इतिहास प्रदूषण तो पाया ही, इसमें डी.ए.वी. के कई लीडरों, प्रिन्सिपलों के चित्र देखे परन्तु, पं. लेखराम जी, महाराणा सज्जनसिंह, ला. मथुरादास आदि के चित्र न मिले। रिर्पोट में इतिहास को अच्छा शीर्षासन करवा दिया गया है। लगता है कि संस्थाओं को सत्य से, तथ्य से, इतिहास से कुछ लेना देना नहीं। पता चला कि इन लोगों के पास आर्य समाज के प्रचार युग की कोई रिर्पोट नहीं है। इससे मेरा मन बड़ा आहत हुआ।

काकोरी के प्राणवीरों की चर्चा:- उत्तरप्रदेश के एक प्रेमी ने किसी सामाजिक पत्र में काकोरी के वीरों पर किसी का लेख पढ़कर पूछा है, "क्या सचमुच वीर अशफाक उल्ला आर्यसमाज शाहजहाँपुर के सत्संगों में आते-जाते थे। अच्छा होता यह बात ऐसा लिखने व कहने वालों से पूछी जाती। पं. लेखराम जी अपने परिचित मौलवियों से मिलने धर्म चर्चा करने आते-जाते थे। इसका कुछ अन्य अर्थ लेना ठीक नहीं। श्री अशफाक उल्ला जी श्रीयुत् रामप्रसाद के प्रेम के बन्धे उन्हें समाज मन्दिर मिलने अवश्य आते थे। वह सच्चे, पक्के देशभक्त थे परन्तु उनका कुरान पर ऐसा विश्वास था कि फांसी पर चढ़ते समय आपके कन्धे पर हमायल (कुरान रखने वाला बस्ता) था।[१] इस पुस्तक के पृष्ठ १९३ पर यह लिखा है कि जेल में दुबले-पतले हो जाने का कारण मित्रों को यह बताया कि आजकल बहुत थोड़ा भोजन लेता हूँ इससे भोजन में बड़ा मन लगता है। यह रामप्रसाद बिस्मिल की संगत की रंगत थी। हमारे लेखक वक्ता बार-बार प्रेरणा देने पर कभी भी ये चर्चा नहीं करते कि मौत के मुँह से निकल कर आये पूज्य भाई परमानन्द जी शीश तली पर धर कर बिस्मिल की पेशी पर लखनऊ पहुँच गये। यह भी इसी अलभ्य स्रोत में लिखा मिलता है।

डॉ. सत्यपाल जी आर्य से बातचीत:- हमने ऐसे अनेक व्यक्ति देखे हैं जो आर्यसमाज की सीढ़ी बनाकर राजनीति में सत्ता के भागीदार बनकर आर्यसमाज को भूल गये और कई आर्यसमाज को हानि पहुँचाने में लगे रहे। श्री डॉ. सत्यपाल जी एक आर्यकुल से हैं। विद्यार्थी जीवन से ही आर्यसमाज में सक्रिय हैं। हमें यह लिखते हुए हर्ष होता है कि आपके मन में माता आर्यसमाज के सेवा के लिए वहीं अरमान और उद्गार हैं जो तीस वर्ष पूर्व थे। अभी इन दिनों बड़ी विनम्रता से आपने देश व समाज सेवा के लिए बातचीत की। हम शीघ्र मिलकर उन्हें कहेंगे कि वह जागरुक होकर राजनीति को दिशा दें। संघ के पुराने सेवक श्री दीनानाथ जी ने जीव को ईश्वर का अंश तो बताया ही है आपने जड़ व चेतन दोनों में जीव को होना बताया है। संघ फिलास्फी और अन्धविश्वास में अन्तर क्या है। श्री सत्यपाल जी इस पर ध्यान दें।

टिप्पणी

१. द्रष्टव्य अंग्रेजों द्वारा प्रतिबन्धित अलभ्य पुस्तक 'असली शहीदाने काकोरी' पृष्ठ १९४।

- वेद सदन अबोहर-१५२११६

जो खोटे काम करने वाला पुरुष अनेक प्रकार से अपने बल को उन्नत कर सबको दु:ख देना चाहे, उसको राजा सब प्रकार से दण्ड दे। तो भी वह अपनी अत्यन्त खोटाइयों को न छोड़े तो उसको मार डाले अथवा नगर से इसको दूर निकाल बन्द रखे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४४

thearyasamaj.org

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग एक वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक**, डिग्गी बाजार, अजमेर।
बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आइ**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन-जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए 'आस्था-भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग-यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था-भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था-भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर** के वेद-प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ्** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित्** के प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं। इसी प्रकार आगे भी 'आस्था-भजन' पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे के बीच अन्य विद्वानों के व अन्य विषयों पर प्रवचन प्रसारित होते रहेंगे।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था-भजन' (चैनल) डिश-टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा-स्काई, वीडियोकोन, बिग-टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार-बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केबल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

thearyasamaj.org

हनुमान आदि बन्दर नहीं थे

- इन्द्रजित् देव

भारतीय इतिहास में अनेक विद्वान् तथा बलवान् हुए हैं। हनुमान उनमें से एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे। उनकी सेवक के रूप में बहुत अच्छी ख्याति है। उनका जीवन आदर्श ब्रह्मचारी का भी रहा है परन्तु हमारे नादान पौराणिक भाइयों ने उन्हें बन्दर मानकर उनके साथ अन्याय किया है:-

एक वे हैं जो दूसरों की छवि को देते हैं सुधार।
एक हम हैं लिया अपनी ही सूरत को बिगाड़।।

वे बन्दर न थे, अपितु पूर्णत: ऊपरोक्त गुणों से युक्त एक प्रेरक, आदर्श तथा कुलीन महापुरुष थे। कुछ प्रमाणों से हम इसे स्पष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम राम से उनकी प्रथम भेंट तब हुई थी, जब राम व लक्ष्मण भगवती सीता की खोज में इधर-उधर भटक रहे थे। खोजते-खोजते वे दोनों ऋष्यमूक पर्वत पर- सुग्रीव की ओर गए तो सुग्रीव उन्हें दूर से देखकर भयभीत हो गया। उसने अपने मन्त्रियों से यह कहा कि ये दोनों वाली के ही भेजे हुए हैं ऐसा प्रतीत होता है। हे वानर शिरोमणी हनुमान! तुम जाकर पता लगाओ कि ये कोई दुर्भावना लेकर तो नहीं आये हैं।

सुग्रीव की इस बात को सुनकर हनुमान जहाँ अत्यन्त बलशाली श्री राम तथा लक्ष्मण थे, उस स्थान के लिए तत्काल चल दिये। वहाँ पहुँचने से पूर्व उन्होंने अपना रूप त्यागकर भिक्षु (=सामान्य तपस्वी) का रूप धारण किया तथा श्री राम व लक्ष्मण के पास जाकर अपना परिचय दिया तथा उनका परिचय लिया।

तत्पश्चात् श्री राम ने अनुज लक्ष्मण से कहा-

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिण:।
नासामवेदविदुष: शक्यमेवं विभाषितुम्।।

वा. रा., किष्किन्धा काण्ड, तृतीय सर्ग, श्लोक २८

जिसे ऋग्वेद की शिक्षा नहीं मिली; जिसने यजुर्वेद का अभ्यास नहीं किया तथा जो सामवेद का विद्वान् नहीं है, वह इस प्रकार सुन्दर भाषा में वार्तालाप नहीं कर सकता।

नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्।
बहु व्याहरतानेन न किंचिदपशब्दितम्।।

-वा. रा., किष्किन्धा काण्ड, तृतीय सर्ग श्लोक २९

अर्थ:- निश्चय ही इन्होंने सम्पूर्ण व्याकरण का अनेक बार अध्ययन किया है। यही कारण है कि इनके इतने समय बोलने में इन्होंने कोई भी त्रुटि नहीं की है।

न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रुवोस्तथा।
अन्येष्वपि च सर्वेषु दोष: संविदित: क्वचित्।।

-वा. रामायण, किष्किन्धा काण्ड, तृतीय सर्ग, श्लोक ३०

अर्थ:- सम्भाषण के समय इनके मुख, नेत्र, ललाट, भौंह तथा अन्य सब अंगों से भी कोई दोष प्रकट हुआ हो, ऐसा कहीं ज्ञात नहीं हुआ।

इससे स्पष्ट है कि हनुमान वेदों के विद्वान् तो थे ही, व्याकरण के उत्कृष्ट ज्ञाता भी थे तथा उनके शरीर के सभी अंग अपने-अपने करणीय कार्य उचित रूप में ही करते थे। शरीर के अंग जड़ पदार्थ हैं व मनुष्य का आत्मा ही अपने उच्च संस्कारों से उच्च कार्यों के लिए शरीर के अंगों का प्रयोग करता है। क्या किसी बन्दर में यह योग्यता हो सकती है कि वह वेदों का विद्वान् बने? व्याकरण का विशेष ज्ञाता हो? अपने शरीर की उचित देखभाल भी करे?

रामायण का दूसरा प्रमाण इस विषय में प्रस्तुत करते हैं। यह प्रमाण तब का है, जब अंगद, जाम्बवान व हनुमान आदि समुद्रतट पर बैठकर समुद्र पार जाकर सीता जी की खोज करने के लिए विचार कर रहे थे। तब जाम्बवान ने हनुमान जी को उनकी उत्पत्ति कथा सुनाकर समुद्र लङ्घन के लिए उत्साहित किया। केवल एक ही श्लोक वहाँ से उद्धृत है-

सत्वं केसरिण: पुत्र:क्षेत्रजो भीमविक्रम:।
मारुतस्यौरस: पुत्रस्तेजसा चापि तत्सम:।।

-वा. रामायण, किष्किन्धा काण्ड, सप्तषष्टितम सर्ग, श्लोक २९

अर्थ:- हे वीरवर! तुम केसरी के क्षेत्रज पुत्र हो। तुम्हारा पराक्रम शत्रुओं के लिए भयंकर है। तुम वायुदेव के औरस पुत्र हो, इसलिए तेज की दृष्टि से उन्हीं के समान हो। इससे सिद्ध है कि हनुमान जी के पिता केसरी थे परन्तु

thearyasamaj.org

उनकी माता अंजनी ने पवन नामक पुरुष से नियोग द्वारा प्राप्त किया था। इस सत्य को स्वयं हनुमान जी ने भी स्वीकार किया, जब वे लंका में रावण के दरबार में प्रस्तुत किए गए थे-

अहं तु हनुमान्नाम मारुतस्यौरसः सुतः।
सीतायास्तु कृते तूर्णं शतयोजनमायतम्।।

– वा. रामायण, सुन्दरकाण्ड, त्रयस्त्रिंश सर्ग

अर्थः- मैं पवनदेव का औरस पुत्र हूँ। मेरा नाम हनुमान है। मैं सौ योजन पार कर सीता जी की खोज में आया हूँ।

हनुमान को मनुष्य न मानकर उन्हें बन्दर मानने वालों से हमारा निवेदन है कि इन दो प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध है कि हनुमान जी बन्दर न थे, अपितु वे एक नियोगज पुत्र थे। नियोग प्रथा मनुष्य समाज में अतीत में प्रचलित थी। यह प्रथा बन्दरों में प्रचलित होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। रामायण के इस प्रबल प्रमाण के होते हुए हनुमान जी को मनुष्य मानना ही पड़ेगा।

रामायण में से ही हम तीसरा प्रमाण भी प्रस्तुत करते हुए सिद्ध कते हैं कि हनुमान मनुष्य ही थे, न कि वे बन्दर थे। यह प्रमाण तब का है, जब हनुमान लंका में पहुँच तो गए थे किन्तु बहुत प्रयास करने पर भी सीता जी का पता न कर पाए तो वे सोचने लगे थे कि बिना सीता जी का अता-पता पाए मैं यदि लौटूँगा तो राम जी तथा स्वामी सुग्रीव जी को क्या सूचना दूँगा? वहाँ हा हाकार मचेगा। वाल्मीकि ऋषि के शब्दों में:-

सोऽहं नैव गमिष्यामि किष्किन्धां नगरीमितः।
वानप्रस्थो भविष्यामि ह्यदृष्ट्वा जनकात्मजाम्।।

वा. रा., सुन्दरकाण्ड, सप्तम सर्ग

अर्थः- मैं यहाँ से लौटकर किष्किन्धा नहीं जाऊँगा। यदि मुझे सीता जी के दर्शन नहीं हुए तो मैं वानप्रस्थ धारण कर लूँगा। हनुमान जी को मनुष्य न मानकर बन्दर घोषित करने वाले अपने पौराणिक भाई-बहनों से निवेदन है कि वे अपना हठ त्याग कर यह तथ्य तुरन्त स्वीकार कर लें कि हनुमान सच्चे वैदिक धर्मी मनुष्य थे, न कि वे बन्दर थे क्योंकि वानप्रस्थी बनने की बात सोचना तो दूर की बात है, वानप्रस्थ क्या होता है, बन्दरों को यह भी ज्ञात नहीं होता। हनुमान को बन्दर मानने वाले लोग तुलसीदास गोस्वामी द्वारा रचित "हनुमान चालीसा" का पाठ करते हैं परन्तु उसमें भी एक प्रमाण ऐसा है जो हमारी बात का समर्थन करता है:-

हाथ वज्र औ ध्वजा विराजे।
कान्धे मूँज जनेऊ साजे।।

काश! ऐसे लोग इस चालीसा में उल्लिखित यह पाँचवा पद बोलते-पढ़ते समय इतना समझ पाते कि इसके अनुसार हनुमान जी अपने कन्धे पर जनेऊ धारण किए फिरते थे तथा बन्दर नहीं, अपितु जनेऊ (= यज्ञोपवीत) तो मनुष्य ही धारण करते हैं।

हनुमान दूरस्थ किसी पर्वत पर जाकर मूर्च्छित लक्ष्मण के उपचार के लिए संजीवनी बूटी लाए थे। यह कार्य भी कोई बन्दर नहीं कर सकता अपितु कोई मनुष्य ही कर सकता था जिसे जड़ी-बूटियों का पर्याप्त ज्ञान हो।

हनुमान से हटकर अब थोड़े विचार उनके समकालीन रामायण के कुछ अन्य पात्रों के विषय में भी प्रस्तुत हैं। इनमें एक प्रसंग वाली की पत्नी तारा से सम्बद्ध है। जब सुग्रीव दूसरी बार वाली को युद्ध के लिए ललकारने गया तो वाली की पत्नी तारा ने अपने पति को राम जी से मैत्री कर लेने की प्रार्थना की परन्तु वाली ने ऐसा न करके सुग्रीव का सामना करने, सुग्रीव का घमण्ड चूर-चूर करने, परन्तु सुग्रीव के प्राण हरण न करने का वचन देकर तारा को वापिस राजप्रसाद में चले जाने को कहा तो-

ततः स्वस्त्ययनं कृत्वा मन्त्रविद् विजयैषिणी।
अन्तःपुरं सह स्त्रीभिः प्रविष्टा शोकमोहिता।।

-वा.रा. किष्किन्धा काण्ड, षोडश सर्ग श्लोक १२

अर्थः- वह पति की विजय चाहती थी तथा उसे मन्त्र का भी ज्ञान था। इसलिए उसने वाली की मङ्गल-कामना से स्वस्तिवाचन किया तथा शोक से मोहित होकर वह अन्य स्त्रियों के साथ अन्तःपुर को चली गई।

मन्त्र का ज्ञान बन्दरों को अथवा बन्दरियों को नहीं होता, न ही हो सकता है। अतः सिद्ध है कि हनुमान का जिन से मिलना-जुलनादि था, उनकी पत्नियाँ भी मनुष्य ही थीं। यही तारा जब अपने पति वाली को प्राण त्यागते देख रही थी तो अन्य बातों के अतिरिक्त यह भी बोली-

यद्यप्रियं किंचिदसम्प्रधार्य कृतं मया स्यात् तव दीर्घबाहो।
क्षमस्व मे तद्धरिवंशनाथ व्रजामि मूर्धा तव वीरपादौ।।

- वा. रा. किष्किन्धाकाण्ड, एकविंश सर्ग, श्लोक २५

thearyasamaj.org

अर्थ:- ''महाबाहो! यदि नासमझी के कारण मैंने आपका कोई अपराध किया हो तो आप उसे क्षमा कर दें। वानरवंश के स्वामी वीर आर्यपुत्र! मैं आपके चरणों में मस्तक रखकर यह प्रार्थना करती हूँ।'' इस श्लोक से सिद्ध है कि वाली आर्यों के एक वंश वानर में जन्मा मनुष्य ही था। इसी प्रकार तारा को भी महर्षि वाल्मीकि ने आर्य पुत्री ही घोषित किया:-

तस्येन्द्रकल्पस्य दुरासदस्य महानुभावस्य समीपमार्या।
आर्तातितूर्णा व्यसनं प्रपन्ना जगाम तारा परिविह्वलन्ती।।

- वा. रा. किष्किंधा काण्ड, चतुर्विंश सर्ग श्लोक २९

अर्थ:- ''उस समय घोर संकट में पड़ी हुई शोक पीड़ित आर्या तारा अत्यन्त विह्वल हो गिरती-पड़ती तीव्र गति से महेन्द्र तुल्य दुर्जय वीर महानुभाव श्री राम के समीप गई।''

वाली की मृत्यु के पश्चात् अङ्गद व सुग्रीव ने वाली के शव का अन्त्येष्टि-संस्कार शास्त्रीय विधि से किया:-

ततोऽग्निं विधिवद् दत्त्वा सोऽपसव्यं चकार ह।
पितरं दीर्घमध्वानं प्रस्थितं व्याकुलेन्द्रिय:।।
संस्कृत्य वालिनं तं तु विधिवत् प्लवगर्षभा:।
आजग्मुरुदकं कर्तुं नदीं शुभजलां शिवाम्।।

- वा. रा. किष्किंधा काण्ड, षड्विंश सर्ग, श्लोक ५०-५१

अर्थ:- ''फिर शास्त्रीय विधि के अनुसार उसमें आग लगाकर उन्होंने उसकी प्रदक्षिणा की। इसके बाद यह सोचकर कि मेरे पिता लम्बी यात्रा के लिए प्रस्थित हुए हैं, अङ्गद की सारी इन्द्रियाँ शोक से व्याकुल हो उठीं। इस प्रकार विधिवत् वाली का दाह संस्कार करके सभी वानर जलाञ्जलि देने के लिए पवित्र जल से भरी हुई कल्याणमयी तुङ्गभद्रा नदी के तट पर आए।''

इस प्रमाण से सिद्ध होता है कि वाली, सुग्रीव, अङ्गद आदि वेद विहित शास्त्रीय कार्य करते थे। यह भी उनके मनुष्य होने का प्रमाण है।

उपर्युक्त तथ्यों के बाद हम अब सामान्य विश्लेषण करते हुए पौराणिकों से पूछते हैं कि वाली की पत्नी तारा, सुग्रीव की पत्नी रुमा हनुमान की माँ अंजनि मनुष्य योनि की स्त्रियाँ थीं तो उनके माताओं-पिताओं ने उन्हें बन्दरों अर्थात् वाली, सुग्रीव तथा केसरी के सङ्ग क्यों ब्याह दिया था? बन्दरों व स्त्रियों से बन्दरों का जन्म होना अव्यवहारिक व अवैज्ञानिक है। अत: यह सर्वथा अमान्य है कि उक्त पुरुष बन्दर थे। यह भी निवेदन है कि बन्दरों, उनकी पत्नियों, उनके पिताओं तथा उनकी माताओं के नाम नहीं होते, उनके जीवन का कोई इतिहास नहीं होता, खाने-पीने व सोने-जागने के अतिरिक्त कोई अन्य कार्य वे करते नहीं। फिर ऊपरोक्त पात्रों के नामकरण क्यों हुए? उनके कार्य-व्यवहार मनुष्यों जैसे-कैसे सम्भव हुए?

वास्तविकता यह है कि वानर एक जाति है। इसे आंग्ल भाषा में सरनेम भी कहते हैं। हिमाचल प्रदेश के काँगड़ा व हमीरपुर जिलों में नाग जाति के कुछ मनुष्य आपको मिल सकते हैं। नाग शब्द का अर्थ सर्प है परन्तु वे इस शब्द को अपने नाम के साथ सहर्ष लिखते हैं। पिछले वर्ष केन्द्र सरकार में कार्यरत एक उच्चाधिकारी जब सेवानिवृत्त हुए था तो किसी विशेष कारण वश उसका नाम भी दैनिक पत्रों में छपा था। तब पता चला कि वह भी ऊपरोक्त नाग जाति का ही सदस्य था। सन् १९६९ में भारत के राष्ट्रपति पद पर वी.वी. गिरि नामक एक दक्षिण भारतीय व्यक्ति आसीन हुआ था। गिरि शब्द का अर्थ पर्वत है परन्तु वह पर्वत न होकर मनुष्य ही था। गिरि उसका सरनेम था या उसकी जाति थी। पंजाब, हरियाणा, हिमाचल, राजस्थान, उत्तरप्रदेश तथा कुछ अन्य प्रदेशों में बहुत-से लोग (अधिकतर जन्मना क्षत्रिय) अपने नाम के साथ सिंह शब्द का प्रयोग करते हैं, जिसका अर्थ शेर है। हरियाणा में बहुत-से लोग मोर जाति से सम्बद्ध हैं और उनके नाम के पीछे मोर शब्द लिखा होता है। पंजाब के एक राज्यपाल जयसुख लाल हाथी हुए हैं। हरियाणा में सिंह मार नामक जाति के कई व्यक्ति आपको मिल सकते हैं।

इस वर्णन के आधार पर हमारा निवेदन है कि जिस प्रकार नाग, गिरि, मोर, सिंह, हाथी व सिंह मार नामक जातियाँ मनुष्यों की ही हैं, न कि सर्पों, पर्वतों, शेरों, हाथियों व शेरों के हत्यारों आदि की हैं, हालांकि इनके शाब्दिक अर्थ ऊपरोक्त ही है। इसी प्रकार रामायण के हनुमान, सुग्रीव, बाली, तारा, रुमा, जाम्बवान व अङ्गद आदि वानर नामक मनुष्य जाति के सदस्य थे, न कि ये बन्दर थे। यह उनके कार्यों व इतिहास से प्रमाणित किया गया है।

- चूना भट्ठियाँ, सिटी सेन्टर के निकट,
यमुनानगर (हरियाणा)

thearyasamaj.org

वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत

वेदभाष्य, वेदभाषाभाष्य, मूलवेद, वेदांगप्रकाश और वैदिक साहित्य

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
	वेद संहिताएँ– (केवल मन्त्र)	
१.	ऋग्वेद संहिता (मूल) मन्त्र– वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	रु. ५००.००
२.	"यजुर्वेद संहिता" (मूल) मन्त्र वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	१८०.००
३.	यजुर्वेद संहिता (मूल) सजिल्द (साधारण)	१००.००
४.	सामवेद संहिता (मूल) मन्त्र वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	८०.००
५.	अथर्ववेद संहिता (मूल) मन्त्र– वर्णानुक्रमणिका सहित सजिल्द (बढ़िया)	३५०.००
६.	चतुर्वेद विषय सूची	४०.००
७.	सामवेद के मन्त्रों की वर्णानुक्रमणिका	२.००
८.	ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सजिल्द	१००.००
९.	ऋग्वेद के प्रथम बाईस मन्त्रों का भाष्य	५.००
	वेद भाष्य–(संस्कृत एवं हिन्दी, दोनों में भाष्य)	
१०.	ऋग्वेदभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	१५०.००
११.	ऋग्वेदभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	२००.००
१२.	ऋग्वेदभाष्य तीसरा भाग (सजिल्द)	२००.००
१३.	ऋग्वेदभाष्य चौथा भाग (सजिल्द)	१५०.००
१४.	ऋग्वेदभाष्य पांचवां भाग (सजिल्द)	२५०.००
१५.	ऋग्वेदभाष्य छठा भाग (सजिल्द)	६०.००
१६.	ऋग्वेदभाष्य सातवाँ भाग (सजिल्द)	२००.००
१७.	ऋग्वेदभाष्य आठवाँ भाग (सजिल्द)	२००.००
१८.	ऋग्वेदभाष्य सप्तम मंडल प्रथम भाग सजिल्द	७०.००
१९.	ऋग्वेदभाष्य सप्तम मंडल द्वितीय भाग सजिल्द (पं. आर्यमुनि)	६०.००
२०.	ऋग्वेदभाष्य अष्टम मण्डल पहला भाग सजिल्द	
२१.	ऋग्वेदभाष्य अष्टम मण्डल दूसरा भाग सजिल्द	
२२.	ऋग्वेदभाष्य नवम मण्डल प्रथम भाग सजिल्द (पं. आर्यमुनि)	१५०.००
२३.	ऋग्वेदभाष्य नवम मण्डल द्वितीय भाग सजिल्द	
२४.	ऋग्वेदभाष्य दसवां मण्डल प्रथम भाग सजिल्द (स्वामी ब्रह्ममुनि)	२००.००
२५.	ऋग्वेदभाष्य दसवाँ मण्डल द्वितीय भाग सजिल्द (स्वामी ब्रह्ममुनि)	९०.००
२६.	यजुर्वेदभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	२००.००
२७.	यजुर्वेदभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	३५०.००
२८.	यजुर्वेदभाष्य तीसरा भाग (सजिल्द)	२५०.००
२९.	यजुर्वेदभाष्य चौथा भाग (सजिल्द)	१५०.००
	वेद भाषाभाष्य – (केवल हिन्दी भाष्य)	
३०.	ऋग्वेदभाषाभाष्य का नमूना	५.००
३१.	ऋग्वेदभाषाभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	२००.००
३२.	ऋग्वेदभाषाभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	३५.००
३३.	ऋग्वेदभाषाभाष्य तीसरा भाग (सजिल्द)	३५.००
३४.	ऋग्वेदभाषाभाष्य चौथा भाग (सजिल्द)	२५.००
३५.	ऋग्वेदभाषाभाष्य पांचवां भाग (सजिल्द)	३०.००
३६.	ऋग्वेदभाषाभाष्य छठा भाग (सजिल्द)	३०.००
३७.	ऋग्वेदभाषाभाष्य सातवाँ भाग (सजिल्द)	५०.००
३८.	ऋग्वेदभाषाभाष्य आठवाँ भाग (सजिल्द)	५०.००
३९.	ऋग्वेदभाषाभाष्य (नवाँ भाग) सप्तम मण्डल पहला भाग (सजिल्द)	२५.००

thearyasamaj.org

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
४०.	ऋग्वेदभाषाभाष्य सप्तम मण्डल द्वितीय भाग सजिल्द (पं. आर्यमुनि)	३५.००
४१.	ऋग्वेदभाषाभाष्य अष्टम मण्डल (सजिल्द)	
४२.	ऋग्वेदभाषाभाष्य नवम मण्डल (सजिल्द)	
४३.	ऋग्वेदभाषाभाष्य दसवां मण्डल प्रथम भाग सजिल्द (स्वा. ब्रह्ममुनि)	४५.००
४४.	ऋग्वेदभाषाभाष्य दसवां मण्डल द्वितीय भाग सजिल्द (स्वा. ब्रह्ममुनि)	४५.००
४५.	यजुर्वेदभाषाभाष्य पहला भाग (सजिल्द)	१००.००
४६.	यजुर्वेदभाषाभाष्य दूसरा भाग (सजिल्द)	३७५.००

स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक विद्यामार्तण्ड

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
४७.	सामवेद अध्यात्मिक मुनिभाष्य (पूर्वार्चिक)	
४८.	सामवेद अध्यात्मिक मुनिभाष्य (उत्तरार्चिक) (दोनो खण्डों का सम्मिलित मूल्य)	४००.००
४९.	अथर्ववेदभाष्य – (काण्ड १ से २०) तीन भाग का एक सेट	

विविध

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
५०.	गोकरुणानिधि (बढ़िया)	५.००
५१.	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश	५.००
५२.	स्वीकारपत्र	३.००
५३.	आर्योद्देश्यरत्नमाला (हिन्दी)	५.००

सिद्धान्त ग्रन्थ

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
५४.	सत्यार्थप्रकाश (सजिल्द बढ़िया)	१२०.००
५५.	आर्याभिविनय (बड़ा आकार सजिल्द)	१०.००
५६.	आर्याभिविनय (बड़ा आकार अजिल्द)	७.००
५७.	आर्याभिविनय (गुटका अजिल्द)	७.००

कर्मकाण्डीय

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
५८.	वैदिक नित्यकर्मविधि	२५.००
५९.	पञ्चमहायज्ञविधि	१२.००
६०.	विवाह–पद्धति	२०.००
६१.	संस्कारविधि (सजिल्द)	७०.००
६२.	हवनमन्त्राः (बड़ा आकार)	५.००

पाखण्ड–खण्डन और शंका–समाधान ग्रन्थ

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
६३.	अनुभ्रमोच्छेदन	
६४.	भ्रमोच्छेदन (साधारण)	४.००
६५.	भ्रमोच्छेदन (बढ़िया)	१०.००
६६.	भ्रान्तिनिवारण	
६७.	शिक्षापत्रीध्वान्त–निवारण (स्वामीनारायण मतखण्डन)	२.००
६८.	वेदविरुद्धमत–खण्डन	१०.००
६९.	वेदान्तिध्वान्तनिवारण	२.००
७०.	शास्त्रार्थ काशी	८.००
७१.	शास्त्रार्थ हुगली (प्रतिमा–पूजन विचार)	६.००
७२.	सत्यधर्म विचार (मेला चान्दापुर)	७.००
७३.	शास्त्रार्थ जालंधर	३.००
७४.	शास्त्रार्थ अजमेर	३.००
७५.	शास्त्रार्थ बरेली (सत्यासत्य विवेक)	८.००
७६.	शास्त्रार्थ मसूदा	५.००
७७.	शास्त्रार्थ उदयपुर	४.००
७८.	शास्त्रार्थ फिरोजाबाद	१०.००
७९.	महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ (सजिल्द)	४०.००

शिक्षा व व्याकरण ग्रन्थ (वेदाङ्ग प्रकाश)

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
८०.	वर्णोच्चारण शिक्षा	१५.००
८१.	सन्धिविषय	
८२.	नामिक	
८३.	कारकीय	१०.००
८४.	सामासिक	
८५.	स्त्रैणताद्धित	
८६.	अव्ययार्थ	५.००
८७.	आख्यातिक (अजिल्द)	१५०.००

शेष भाग अगले अंक में.......

thearyasamaj.org

राजस्थान के गौरव राजस्थानी भाषा के कवि उमरदान जी का अमर काव्य हमें परोपकारिणी सभा के सम्माननीय सदस्य डॉ. खेतलखानी जी की कृपा से प्राप्त हुआ। इस पुस्तक का तीसरा संस्करण १९३० में प्रकाशित हुआ था। इसमें उमरदान जी की अनेक रचनाओं का संग्रह है। इस पुस्तक के पृष्ठ संख्या ६० से ९४ तक 'दयानन्द री दया' नाम से उनकी रचना प्रकाशित है। कवि और काव्य दोनों ही महत्त्वपूर्ण होने से पाठकों के लाभार्थ दयानन्द दर्शन को प्रकाशित कर रहे हैं। यह एक इतिहास का भाग है। पाठक लाभ उठा सकेंगे।

- सम्पादक

पिछले अंक का शेष......

(१६)

अमुद्रित काव्य की प्रति ऊमरदान जी ने ही खोज निकाली थी, जिसको जोधपुर के मुत्सद्दी बच्छराज जी सिंघवी ने उदयपुर में रहते समय प्रथम वार सं० १६५८ में प्रकाशित की। इस पुस्तक के सिवाय उनकी रचनाओं में से दो पुस्तकें "डफोलाष्टक हुंडी" सं० १६५७ में और "जसवन्त जस जलद" सं० १६५२ वि० में उनके जीवनकाल में प्रकाशित हो चुकी थीं।

ऐसे आनन्दी एवं प्रतिभाशाली कवि का काव्य भला किस प्रकार नीरस रह सकता था। उसमें रस छलक रहा है। किसी भी पद्य को देख लीजिये आप आनन्द विभोर हो जावेंगे। कवि ने अपने काव्य में जिन खुले शब्दों द्वारा सामाजिक कुरीतियों का भण्डाफोड़ किया है उसे पढ़ते २ जी नहीं अघाता। वास्तव में इस सुन्दर काव्य के रचयिता चारण कुलभूषण कविवर ऊमरदान जी थे भी हास्यरस के अवतार। उनके स्वर्गवास को अभी अधिक काल नहीं बीता है। जिन लोगों ने उन्हें देखा है उनको ऊमरदान जी की आकृति तथा व्यवहार आदि का अच्छी तरह पता है। उनका जोधपुर के राजदरबार में भी बड़ा मान

था। आर्यसमाज के प्रवर्तक वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती को जब संवत् १९४० वि० में जोधपुर के स्वर्गीय नरेश हिज हाइनैस राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराजा सर जसवंतसिंह बहादुर जी० सी० एस० आई० ने अपनी राजधानी में पधारने का निमंत्रण भेजा था तब उन्हें मेवाड़ राज्य से लाने के लिये कवि ऊमरदान ही भेजे गये थे। जिन लोगों ने उनको देखा है उन्हें आज भी ऊमरदान जी का ध्यान आने पर उनका मोटे बदन वाले, घुटनों तक की धोती पहने, हाथ में डंडा लिये, निर्भीक प्रसन्न मुख का चित्र आँखों के सामने दिखाई पड़ने लगता है।

बचपन में ऊमरदान जी के माता पिता का स्वर्गवास हो जाने से और बड़े भाई आदि की अवहेलना से उन्हें कुटुम्ब का सुख नहीं मिला और जमीन जायदाद के झगड़ों से बचकर वे बचपन में ही खेड़ापा के रामस्नेही साधुओं के कंठी बन्द शिष्य हो गये। उस मंडली में उनकी शिक्षा दीक्षा हुई और जब उन्हें सं० १९३६ में कुछ ज्ञान हुआ तब वे साधुओं का संग छोड़ कर गृहस्थी बने और उनके गुण अवगुण भी जनता को बताने

earyasamaj.org

लगे। इस काव्य को पढ़ने पर हमारे इस कथन की पुष्टि हो ही जायगी।

यह काव्य मारवाड़ी-डिंगल भाषा का एक सरस काव्य है। इसी कारण इसका आदर भी विशेष है। राजस्थानी चारण कवियों का काव्य प्रायः डिंगल भाषा में ही पाया जाता है। यह "डिंगल" एक प्रकार की असंस्कृत भाषा है। ब्रजभाषा की कविता का नाम जैसे "पिंगल" कहा जाता है वैसे ही मरूभाषा (राजस्थानी) की कविता को "डिंगल" कहते हैं। यह "डींग" और "गल" शब्द मिल कर बना है। इसका अर्थ ऊँची बोली का है। क्योंकि इस भाषा के कवि उच्च स्वर से अपनी कविता का पाठ करते हैं। ब्रजभाषा की कविता में ध्वनि उच्च नहीं होती और उसमें मधुरता विशेष होती है। इसलिए इस ब्रजभाषा को राजस्थान में पिंगल अर्थात् पांगली (लँगड़ी-लूली) कविता कहते हैं। पिंगु का अर्थ लँगड़ी और गल का मायना बात या बोली है। स्वर्गीय कविराजा मुरारदान जी महामहोपाध्याय ने डिंगल" शब्द का अर्थ अनघड़ पत्थर या मिट्टी का

thearyasamaj.org

डगल (ढेला) किया है[1]। क्योंकि इसमें गुजराती, मराठी, मागधी, सिन्धी, ब्रजभाषा, संस्कृत, फ़ारसी, अरबी आदि कई भाषाओं के अपभ्रंश शब्द पाये जाते हैं। अपभ्रंश भी साधारण नहीं! वह भी इतना ज्यादा कि उसका असली रूप जान लेना भी कठिन हो जाता है। जैसे—

संस्कृत में—	डिंगल भाषा में—
मुक्ताफल	मोताहल
युधिष्ठिर	जुजठल
ध्रुवभट	धूहड़
श्रीहर्ष	सीहा या सीहड़
हस्तबल	हाथल
आलभट	अलट

कितना रूपान्तर है? इस भाषा में ट ठ ड ढ ण और ल आदि अक्षरों की प्रधानता होती है और "स" का प्रयोग प्रायः "ह" होता है। इस भाषा में ॠ, ऋ, ऌ, ए, ऐ, औ, ये स्वर नहीं होते और तालवी (श) और मूर्धनी (ष) के स्थान पर

१—देखो प्रिलिमिनरी रिपोर्ट ऑन दी ऑपरेशन इन सर्च ऑफ मैन्युस्क्रिप्ट्स आफ बार्डिक क्रानिकल्स (महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री सी० आई० ई०) पेज १४–१५ सन् १९१३ ई०।

शेष भाग अगले अंक में......

thearyasamaj.org

पुस्तक - समीक्षा

पुस्तक का नाम-वैशेषिकदर्शनम् (प्रशस्तपादभाष्यसहितम्)
लेखक - आचार्य आनन्दप्रकाश
प्रकाशक - आर्ष-विद्या प्रचार न्यास, आर्ष शोध संस्थान (कन्या गुरुकुल) अलियाबाद, मं. शामीरपेट, जि. रंगारेड्डी-५०००७९ (तेलंगाना)
मूल्य - ६००/- रु. **पृष्ठ संख्या** - ५४५

शुद्ध वैदिक ज्ञान प्राप्ति के लिए वैदिक साहित्य का पढ़ना अत्यन्त आवश्यक है, उसमें भी दर्शन शास्त्रों का पढ़ना और अधिक महत्त्व रखता है। दर्शनों में ऋषियों ने व्यवहार और परमार्थ दोनों ही विद्याओं का वर्णन किया है, दर्शनों का मुख्य ध्येय मनुष्य को ठीक-ठीक ज्ञान करवाकर नितान्त दु:खों से छुड़ाना है। इन दर्शनों में दोनों विषय होते हुए भी किसी में अध्यात्म का विषय अधिक है तो किसी में अधिभूत का, दोनों विषय ही हमारे लिए आवश्यक हैं।

६ दर्शनों में से जिन दर्शनों के विषय आपस में अधिक एक-दूसरे से मिलते हैं उनको समान शास्त्र कह दिया जाता है। उनके जोड़े विद्वानों ने बना दिये हैं। योग-सांख्य, मीमांसा-वेदान्त और न्याय-वैशेषिक का जोड़ा बना दिया है। सभी दर्शनों का अपना-अपना विषय है, इनमें वैशेषिक का विषय द्रव्यादि पदार्थों का विवेचन है। जिनके मध्य में प्राणियों का जीवन पनपता है, फलता-फूलता है। समस्त अर्थ तत्त्व को वैशेषिक छ: वर्गों में विभाजित कर उन्हीं का मुख्य रूप से वर्णन करता है।

वैशेषिक दर्शन को समझने में कुछ कठिन कहा गया है, उस कठिनता को दूर करने के लिए अनेक विद्वानों ने इस पर भाष्य व टिकाएँ लिखी हैं। इस दर्शन पर प्रशस्तपाद भाष्य मिलता है जिसको पढ़ने के लिए महर्षि दयानन्द ने भी कहा है। इस भाष्य की उपयोगिता को देखते हुए, इसकी हिन्दी व्याख्या व सूत्रों की व्याख्या आर्य जगत् के योग्य विद्वान् आचार्य आनन्द प्रकाश जी ने की है। आर्य जगत् के छात्र प्राय: प्रशस्तपाद भाष्य से वंचित रह जाते थे, अब इस भाष्य की व्याख्या से उनको सुविधा होगी।

प्रशस्तपाद भाष्य के विषय में व्याख्याकार आचार्य आनन्द प्रकाश जी लिखते हैं "वैशेषिक दर्शन पर आचार्य प्रशस्तपाद या प्रशस्तदेव ने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं प्रमाणिक ग्रन्थ रत्न की रचना की है, जो ग्रन्थकार के नाम पर प्रशस्तपाद भाष्य के नाम से प्रसिद्ध है। ग्रन्थकार ने इसे पदार्थ संग्रह कहा है। यह कहना कठिन है, कि ग्रन्थकार ने पदार्थधर्मसंग्रह-ऐसा ग्रन्थ के नामकरण की भावना से लिखा है अथवा केवल विषय-निर्देश की भावना से। पुनरपि नाम के रूप में भी इसका व्यवहार या प्रयोग कोई आपत्तिजनक नहीं है।

इस प्रशस्तपाद भाष्य में वैशेषिक के प्रतिपाद्य पदार्थों का जिस प्रकार वर्गीकरण करके क्रमपूर्वक विवरण प्रस्तुत किया है उसको विद्वत्समाज ने अत्यधिक आदर दिया है, वैशेषिक के समस्त प्रतिपाद्य विषय को बुद्धिगत करके ग्रन्थकार ने स्वतन्त्र रचना के रूप में उन सब विषयों को ऐसी पद्धति से प्रस्तुत किया जो अध्येता के लिए अति सुविधाजनक रही।"

इस नवीन पुस्तक में व्याख्याकार ने विस्तृत भूमिका लिखी है, जिसमें महर्षि कणाद, वैशेषिक दर्शन, प्रशस्तपाद भाष्य के विषय में अध्येताओं को विस्तार से जानकारी प्राप्त होगी। विषय सूची में भी ग्रन्थकार ने विशेष ध्यान रखा है। प्रत्येक अध्याय, आह्निक, सूत्र का ग्रन्थ क्रमानुसार विषय आ जाये इसको ध्यान में रखकर विषय लिखे गये हैं। साथ में प्रशस्तपाद भाष्य की विषय-सूची भी दी गई है।

ग्रन्थ में अध्येताओं की सुविधा के लिए प्रशस्तपाद भाष्य का संस्कृत भाग देकर उसके नीचे हिन्दी टिका दी गई है। विषय को स्पष्ट करने के लिए यथावश्यक चित्र भी दिये गये हैं वेद, उपनिषद् व अन्य शास्त्रों के प्रमाण दिये गये हैं।

यह पुस्तक दर्शन के अध्येताओं के लिए बहुत ही उपयोगी है, वैशेषिक दर्शन को गहराई से समझने वाला पाठक इसको अवश्य पढ़े।

सुन्दर आवरण, दृढ़ बन्धन व सुन्दर छपाई से युक्त इस पुस्तक को दर्शन शास्त्र प्रेमी सम्मान देंगे इसी आशा के साथ-

- सोमदेव, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

मनुष्यों को युक्ति और विद्या से सेवन किये हुए सब सृष्टिस्थ पदार्थ शरीर, आत्मा और सामाजिक सुख कराने वाले होते हैं। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५७**

thearyasamaj.org

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। *गुरुकुल*- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। *अतिथि सेवा*- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। *गोशाला*- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। *वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम*- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। *विशाल पुस्तकालय*- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। *व्यायामशाला*- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

thearyasamaj.org

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ दिसम्बर २०१४ तक)

१. श्रीमती पुष्पलता उपाध्याय, अजमेर २. श्री हर्षवर्धन, अजमेर ३. श्रीमती माता कौशल्या, बिकानेर, राज. ४. श्री शशिभूषण मल्होत्रा, नई दिल्ली ५. श्री यशवीर जयवीर, अजमेर ६. श्री सुनिल रश्मि, जालन्धर, पंजाब ७. श्री विवेक बेला, दिल्ली ८. श्री क्रान्ति शर्मा, सहारनपुर, उ.प्र. ९. महाशय भगवानसिंह आर्य, झज्जर, हरि. १०. श्रीमती पुष्पलता, ममता, प्रीती, नई दिल्ली ११. श्री प्रभुलाल कुमावत, किशनगढ़, राज. १२. श्री राजेश शर्मा, अजमेर १३. श्री भगवान सहाय, अजमेर १४. श्री रंजन हाण्डा, नई दिल्ली १५. श्री राजकुमार मनढना, मुम्बई, महा. १६. श्रीमती ऋचा शेखर, बेंगलूर १७. श्री आनन्द सोनाली अग्रवाल, फरीदाबाद, हरि. १८. सुश्री अशिका नवाल, अजमेर १९. श्री अतुल शर्मा, अजमेर २०. श्री वीरेन्द्र विक्रमसिंह राठी, गुड़गाँव, हरि. २१. श्री महेश प्रसाद टेलर, जयपुर, राज. २२. स्वस्तिकामः चैरिटेबल ट्रस्ट, अमरावती, महा. २३. श्री भास्कर सेन गुप्ता, बेंगलूर, कर्नाटक २४. श्री अवनीश कपूर, नई दिल्ली २५. श्री रामानन्द, दिल्ली २६. श्री देवेन्द्र कुमार आर्य, कोटा, राज. २७. श्री संजीव ममता बंसल, यू.के. २८. श्री आदित्य बंसल, यू.के. २९. श्री अंश बंसल, यू.के. ३०. श्री राजेन्द्र सिंह, दिल्ली ३१. श्री योगेश सबरवाल, नई दिल्ली।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ दिसम्बर २०१४ तक)

१. श्रीमती पुष्पलता उपाध्याय, अजमेर २. श्री वेद मलिक, नई दिल्ली ३. श्री कैलाशचन्द्र शर्मा, अजमेर ४. श्री रमेश मुनि, अजमेर ५. श्रीमती पुष्पलता, ममता, प्रीती, नई दिल्ली ६. श्रीमती प्रेमलता शर्मा, अजमेर ७. श्रीमती पुष्पा लोढ़ा, अजमेर ८. डॉ. सुमन राविस, कैथल, हरि. ९. श्री अनुराग मंजुला शर्मा, अजमेर १०. श्रीमती रामेश्वरी गिल, अजमेर ११. श्रीमती देव कंवर, जैसलमेर, राज. १२. श्री राजेश त्यागी, अजमेर १३. श्री देवपाल आर्य, अलीपुर, खेड़ी १४. श्री पप्पू गुर्जर, अजमेर १५. श्री योगेश देव, अजमेर १६. श्री मंयक, अजमेर १७. श्री कैलाशचन्द्र शर्मा, अजमेर १८. श्री महेश प्रसाद टेलर, जयपुर, राज. १९. श्री रामप्रसाद, अजमेर २०. श्रीमती तारावन्ती कोहली, दिल्ली २१. श्री सान्निध्य माहेश्वरी, अजमेर २२. श्री कमलेश पुरोहित, अजमेर २३. श्री राजेन्द्र सिंह, दिल्ली २४. श्री सूरज प्रकाश यादव, बीकानेर, राज.।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल अग्नि के बीच में उनका होम कर शुद्ध वायु वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

यज्ञ आदि व्यवहारों के बिना गृहाश्रम में सुख नहीं होता। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५९**

thearyasamaj.org

हमारे पारिवारिक -सत्संग

- पं. जगत्कुमार शास्त्री 'साधुसोमतीर्थ'

स्मृतिशेष श्री पं. जगत्कुमार शास्त्री ''साधुसोमतीर्थ'' आर्यसमाज के एक प्रतिष्ठित विद्वान्, वक्ता एवं लेखक हुए हैं। वेद की विचार-धारा का प्रचार-प्रसार कैसे हो, इस विषय पर वे प्रायः लिखते रहते थे। सम्वाद और सम्पर्क का कोई विकल्प नहीं है। पारिवारिक सत्संग भी उसका एक माध्यम हो सकता है। इस सम्बन्ध में हम उनका एक पुराना लेख पाठकों के लाभार्थ दे रहे हैं।

-सम्पादक

१- आर्य समाज के पहले-पहले विज्ञवरों ने वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार, पारस्परिक परिचय और सद्भाव के सम्वर्धन एवं व्यक्तिगत जीवन में सामाजिक सहयोग के आदान-प्रदान के लिये एक बहुत ही उत्तम उपाय आरम्भ किया था- अर्थात् पारिवारिक सत्संगों का आयोजन। अपनी प्रभावपूर्ण उपयोगिता और व्यावहाकिता के कारण पारिवारिक-सत्संगों की योजना अत्यन्त सर्वप्रिय है। जिन नगरों वा ग्रामों में जीवित, जागृत आर्यसमाजों के संचलन हो रहे हैं, उनमें सुव्यवस्थित रूप में पारिवारिक सत्संगों के सफल आयोजन भी अवश्य ही देखने में आते हैं। इसी प्रकार जो स्वाध्यायशील, जिज्ञासु, श्रद्धा सम्पन्न, उदार हृदय, सद्गृहस्थ नर नारी होते हैं। वे भी अपने-अपने शुभ घरों पर, अपने मित्रों के घरों पर तथा सुविधाजनक स्थानों एवं अवसरों पर आवश्यक तैयारी के साथ पारिवारिक सत्संगों के आयोजन अवश्य ही करते रहते हैं। सोलह संस्कारों और आर्ष पर्वों के आयोजनों से भिन्न ही ये पारिवारकि सत्संग होते हैं।

२- पारिवारिक-सत्संग का समय उसमें भाग लेने वाले आर्य-परिवारों और विद्वानों आदि की सुविधा के अनुसार ही रखना चाहिये। इस विषय में आवश्यक विचार-विमर्श पहले ही कर लिया जाये। समय और स्थान की सूचना सभी आर्य पुरुषों, पड़ौसियों, मित्रों और रिश्तेदारों को पर्याप्त समय पूर्व ही दे देनी चाहिये। यह कार्य मुख्यतया प्रत्येक सद्गृहस्थ को स्वयं ही करना चाहिये। आर्य पुरुषों को पुरुष और आर्य देवियों को आर्य देवियाँ प्रेमपूर्वक अपने-अपने पारिवारिक सत्संगों में प्रेमपूर्वक निमन्त्रित किया करें। यह कार्य बच्चों से अथवा नौकरों से न कराया जाये। हाँ, दोबारा याद दिलाने या बुलवाने में इनका भी सहयोग लिया जा सकता है। बच्चों और नौकरों को पूर्ण शिष्ट होना आवश्यक है।

३- यदि पारिवारिक सत्संगों की योजना किसी आर्यसमाज अथवा अन्य संस्था के आधीन चलती है, तब भी सत्संगियों को प्रेमपूर्वक निमन्त्रित करना तो उन सद्गृहस्थों का ही काम है, जिनके घर पर सत्संग का आयोजन होने वाला है। इस काम को समाज वा संस्था के चपरासी या मन्त्री अथवा संयोजक के भरोसे न छोड़ा जाये। सत्संगों की सफलता में व्यक्ति सम्पर्क का महत्त्व ये सबसे अधिक है। यदि किसी समाज वा संस्था द्वारा पारिवारिक सत्संग सम्पन्न कराये जाते हों, तो यह भी आवश्यक है कि समाज वा संस्था के नियमित साप्ताहिक, पाक्षिक वा मासिक सत्संगों के समय पर ही कोई पारिवारिक सत्संग न रखा जाये। संस्कारों आदि के लिये भी समाजों आदि के सत्संगों को न करना, त्याग देना या, संक्षिप्त-सा करना ठीक नहीं। इससे समाज आदि की हानि तो होती ही है, राग द्वेष और मनोमालिन्य की अवांछनीय स्थितियाँ भी प्रायः पैदा हो जाये करती हैं।

४- जो लोग यह चाहते हैं कि उनके पारिवारिक सत्संग विशेष रूप से रोचक और सफल हों, उनको दूसरों के घरों पर होने वाले सभी पारिवारिक सत्संगों में नियमानुसार, नियत समय पर अवश्य ही उपस्थित होना चाहिये। जो दूसरों के सत्संगों में नियमपूर्वक जाते हैं, उनके सत्संगों में दूसरे उत्साह पूर्वक अवश्य ही पधारते हैं। यदि कोई विशेष बाधा या कठिनाई हो, तो बात दूसरी है। ऐसे अवसरों पर अपनी असमर्थता सूचित की जा सके तो अच्छा है।

५- पारिवारिक सत्संगों में गायन, वादन, सन्ध्या, उपासना, हवन, वैदिक-प्रवचन, सामायिक भाषण आदि के सभी आवश्यक कार्यक्रम योजना और दृढ़ता के साथ दो-अढ़ाई घंटे में ही पूरे कर लेने चाहिये। अधिक विलम्ब होने पर तो सत्संग में फीकापन अवश्य ही आ जायेगा। और आगामी सत्संगों में बाधायें भी होने लगेंगी। यदि किसी विशेष कारण से पारिवारिक-सत्संग को शीघ्र ही समाप्त करना आवश्यक हो या संक्षिप्त करना पड़े, तो कुछ हर्ज नहीं हाँ, इसमें कोई सत्संगी भाई बाधक न बनें।

६- पारिवारिक ही नहीं अपितु प्रत्येक सत्संग का स्थान, आसन, दरी, चादर आदि बिछावना और यज्ञपात्रों आदि की सफाई और सुन्दरता का भी अवश्य ध्यान रखना चाहिये। नियत समय से पूर्व ही सब कुछ देखना,

thearyasamaj.org
व्यवस्था और तैयार कर लेना चाहिये जिससे कि समय पर कोई कठिनाई न हो। प्रतिदिन के व्यवहार में आने वाले बिस्तरों के उपकरण पारिवारिक सत्संगों में न बिछाये जाये, यही उचित है। यदि हवन भी होने वाला हो तो शुद्ध घी, उत्तम हवन सामग्री, हवन कुण्ड और सूखी उत्तम समिधाओं एवं यज्ञ पात्रों की पूरी व्यवस्था पहले ही कर ली जाये।

७- हवन के सम्पादन और गायन, वादन, प्रवचन, सम्भाषण तथा धार्मिक ग्रन्थों के पठन-पाठन आदि के लिये स्थानीय विद्वानों का सहयोग प्रयत्नपूर्वक प्राप्त किया जाय। पात्र-भेद से दक्षिणा और आदर सत्कार पूर्वक उनका यथोचित सम्मान भी किया जाय। परन्तु दान-दक्षिणा आदि की मात्रा पारिवारिक सत्संगों में अधिक न हो, तभी उत्तम है। यदि मध्यम श्रेणी के गृहस्थों पर पारिवारिक सत्संग का आर्थिक भार अधिक हो जायेगा, तो उन्हें कष्ट होगा और वे दोबारा कभी पारिवारिक सत्संग का नाम भी नहीं लेंगे। इसीप्रकार यदि सम्पन्न सद्गृहस्थ दान-दक्षिणा आदि के अधिक प्रदर्शन करेंगे, तो मध्यम स्थिति के स्त्री-पुरुषों में उनकी बराबरी न कर सकने के कारण कई प्रकार के अवांछनीय विचार जगेंगे।

८- पारिवारिक सत्संगों में यज्ञ शेष वा प्रसाद के रूप में कुछ मिष्ठान, फल या मेवा, मिश्री आदि भी अवश्य ही बाँटना चाहिये। यह कार्य सत्संग के अन्तिम चरण में ही सम्पन्न होना चाहिये। मँहगे भोजन, बड़े जलपान, चाय पार्टी आदि न हों। तभी उत्तम है, जिससे कि सभी लोग अपने-अपने पारिवारिक सत्संगों का प्रबन्ध सुविधापूर्वक कर सकें। साधारण खीलों, बताशों, इलायची दाना आदि से ही प्रसाद का काम चला लेना चाहिये।

९- यदि किसी पारिवारिक सत्संग में कभी कोई परदेसी यात्री, विद्वान्, उपदेशक, भजनोपदेशक या संन्यासी आदि भी अचानक ही आयें वा उपस्थित हो सकें, तो उसकी उपस्थिति का पूरा लाभ यथोचित रीति से आयोजकों को उठा लेना चाहिये। उस महानुभाव का परिचय तो सभी को दे ही देना चाहिये।

१०- यदि किसी पारिवारिक सत्संग में एक से अधिक विद्वान् उपदेशक, गायक आदि उपस्थित हों, तो उन सभी को गायन, भाषण आदि का अवसर देना आवश्यक नहीं है। ऐसा करने से सत्संग प्रायः बिगड़ ही जाते हैं। अधिक भाषण कराने का लोभ छोड़ देना चाहिये। जो गायक, वादक, उपदेशक, पुरोहित जिस-जिस कार्य और जितने समय के लिये पहले से मनोनीत हों, उनको ही अवसर देना चाहिये। साधारणतया व्यवस्था को बदला न जाये। हाँ, यह तो कभी-कभी हो सकता है कि स्थानीय, विद्वानों को एकान्त में पूछ कर, उनकी स्वीकृति से किसी परदेशी गायक, वादक, उपदेशक आदि को उनका नियत समय दे दिया जाये। यह काम विशेष समझदारी और स्निग्धता के साथ ही शोभा देता है।

११- जिनके बड़े घर-आँगन आदि होते हैं, उनके घरों पर पारिवारिक सत्संगों के आयोजन प्रायः रक्खे जाते हैं और अधिक सुविधाजनक भी होते हैं। परन्तु नीति ऐसी होनी चाहिये कि छोटे घर, स्थान वाले भी अपने घरों पर पारिवारिक सत्संगों के आयोजन करके आनन्दित हो सकें। उन-उन के घर के पास की गली में, छत पर, या समीप के किसी खुले अथवा अन्य सार्वजनिक स्थान पर भी उनको पारिवारिक सत्संग के आयोजन का अवसर दिया जाये।

१२- पारिवारिक-सत्संगों में इस बात का भी पूरा ध्यान रखा जाये कि किसी भी भूल-चूक या किसी की शरारत से मनोमालिन्य के अवसर कभी आने ही न पाये। राजनीति की सभी चर्चाओं को तो सभी प्रकार के धार्मिक अनुष्ठानों और प्रचार प्रसंगों से दूर-दूर ही रखा जाये। यदि नगर में कोई किसी प्रकार का चन्दा माँगा जा रहा हो, तो पारिवारिक सत्संग के अवसर पर वह चन्दा न मांगा जाये। धार्मिक सत्संगों में चन्दा मांगने की कुप्रवृत्ति का यह अवश्यम्भावी परिणाम होता है कि लोग सत्संगों में आना-जाना ही छोड़ देते हैं।

१३- पारिवारिक-सत्संगों का एक रोचक और आवश्यक कार्यक्रम यह भी है कि सभी सत्संगियों का पारस्परिक परिचय हो जाये और आपस की घनिष्टता निरन्तर बढ़ती ही रहे। नवागन्तुकों का परिचय तो आवश्यक ही है। इन सत्संगों के द्वारा रिश्ते-नाते सुनिश्चित करने, सुख दु:ख में हाथ बंटाने, अधिकारी युवक-युवतियों के प्रशिक्षण एवं रोजगार आदि में सहयोग के साधन भी अपरोक्ष रूप में जुटाये जा सकते हैं और समाज के दुर्बल एवं आश्रितजनों की जानकारी प्राप्त करके, उनको उचित अवसर पर उचित सहायता भी दी जा सकती है।

१४- जो सामाजिक हित की सूचनायें हों, वे भी सब को दी जा सकती हैं। यदि कभी कहीं कोई त्रुटि दिखाई दे, तो उसे भावी कार्यक्रमों में सुधारा जाये। उसके कारण किसी भी प्रकार का विक्षोभ न बढ़ने पाये। प्रत्येक पारिवारिक सत्संगों के अन्त में आगामी पारिवारिक सत्संग का समय और स्थान आदि भी सुनिश्चित और उद्घोषित कर देना चाहिये।

- आर्योपदेशक सी-२/७३,
अशोक-विहार फेज-२, देहली-५२

thearyasamaj.org

यह कैसा गणतन्त्र दिवस है?

- रामनिवास गुणग्राहक

यह कैसा गणतन्त्र दिवस है?
तन्त्रहीन गण आज विवश है।।

सत्ताधारी मस्त हो रहे, तन्त्र आज सब ध्वस्त हो रहे।
चेहरे बदले ढंग न बदला, भारतवासी त्रस्त हो रहे।।
दोनों हाथों लूट हो रही, जन शोषण तो जस का तस है-
यह कैसा गणतन्त्र दिवस है।।

ऐसे यहाँ अंहिसावादी, पहन-पहन कर उजली खादी।
गोरों से समझौते करके गर्म लहू की नदी बहादी।।
सत्ता-भूखे चूँस रहे, भारत की पड़ी नस-नस है-
यह कैसा गणतन्त्र दिवस है।।

कहाँ कीर्ति क्रान्ति-वीरों की, चमक आज फीकी हीरों की।
वाचालों ने मिल कुटिलों से, शान बिगाड़ी रणधीरों की।।
धरम-दलालों का प्रचम है जयचन्दों का खूब सुयश है-
यह कैसा गणतन्त्र दिवस है।।

फूलों से कुछ खेल रहे थे, शोषण से करमेल रहे थे।
पूजा उन्हें उन्हें भूले जो क्रूर यातना झेल रहे थे।।
कर अपमान राष्ट्रवीरों का गया दुःख दल-दल में धँस है-
यह कैसा गणतन्त्र दिवस है।।

क्या-क्या जुल्म कर रहे अपने, दिखा-दिखाकर सुन्दर सपने।
हर सुख-सुविधा को समेटकर, छोड़ दिया यूँ हमें तड़पने।।
कैसा सूर्योदय 'गुण ग्राहक' छाया चारों ओर तमस है-
यह कैसा गणतन्त्र दिवस है।।
तन्त्रहीन गण आज विवश है।।

- महर्षि दयानन्द स्मृति भवन, जोधपुर, राज.

महान भारत को महान रखना

- नरेश हमिलपुरकर

हर हाल में भारत का आनबान शान रखना
वसीयत करके वतन के नाम जान रखना

एकता अखंडता, प्रेम भाइचारे से रहकर
विश्वगुरु भारत की अमिट पहचान रखना

हमारे सुख शांति पर जलने वाले बहुत हैं
सदा सुरक्षित ये धरती आसमान रखना

चाहे कोई कुछ भी बने, जहाँ भी रहे मगर
वतन की मिट्टी, हवा, पानी का अहसान रखना

भारत माता के सारे सच्चे सपूत बनकर
याद हमेशा अमर जवानों का बलिदान रखना

लिखकर अंबर चाँद सूरज और सितारों पर
वन्दे मातरम्, जय जवान जय किसान रखना

अनगिनत बलिदान देकर आजादी पायी है
इसी तरह महान भारत को महान रखना

-चितगुघा, बीदर, कर्नाटक

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

thearyasamaj.org

वैदिक चार-धाम

-महात्मा चैतन्यमुनि

जब से आलस्य एवं प्रमाद के कारण वेद का पठन-पाठन छूटा, अनेक प्रकार के पाखण्ड एवं आण्डम्बर फैलते चले गए। आज व्यक्ति ईश्वर, उपासना, धर्म, कर्म, यज्ञ, व्रत, तीर्थ, श्राद्ध तथा गुरु एवं गुरुमन्त्र आदि के वास्तविक महत्त्व एवं स्वरूप आदि को पूर्णरूप से विस्मृत कर चुका है। चार-धाम के सम्बन्ध में भी अनेक प्रकार की कल्पित मान्यताएँ स्थापित करके व्यक्ति जीवन को बर्बाद कर रहा है। चारों दिशाओं में चार-धामों के नाम पर चार स्थान सुनिश्चित कर दिए गए हैं जिनकी यात्रा करके व्यक्ति स्वयं को समस्त पापों से मुक्त होने तथा भवसागर से पार हो जाने की मिथ्या धारणा बनाए हुए हैं। वास्तव में यदि पापों से मुक्त होना इतना ही आसान है तो यह तो किसी के लिए भी असम्भव नहीं है। लोग पैदल या किराया खर्च करके वहाँ पहुँच सकते हैं। ये कल्पित किए गए धाम हैं- पूर्व में जगन्नाथ-धाम, दक्षिण में रामेश्वरम-धाम, पश्चिम में द्वारकापुरी-धाम और उत्तर में बद्रीनाथ-धाम। इन में से तीन भगवान् विष्णु को समर्पित हैं और चौथा धाम रामेश्वरम, भगवान् शिव को समर्पित है। वास्तव में चार-धाम क्या हैं, इस पर चिन्तन करते हैं। ऋग्वेद में एक मन्त्र है-

चत्वारो मा मशर्शारस्य शिश्वस्त्रयो राज्ञ आयवसस्य जिष्णोः।
रथो वां मित्रावरुणा दीर्घाप्साः स्यूमगभस्तिः सूरो नाद्यौत्।।

(ऋ. १-१२२-१५)

मन्त्र में प्रार्थना की गई है कि मुझे मशर्शार के चार पुत्र प्राप्त हों। 'मशर' शब्द क्रोध का वाचक है। उसका शार-हिंसन करने वाला मशर्शार है। क्रोध को नष्ट करने वाला व्यक्ति ही धर्म कार्यों में प्रवृत्त हो सकता है, क्रोध की अवस्था में कोई धर्म कार्य सम्भव नहीं। क्रोध रहित व्यापारी ही व्यापार में सफल होकर अर्थ का अर्जन करता है। क्रोध की अवस्था में सांसारिक आनन्दों (काम) का भी सम्भव नहीं। क्रोध में भूख भी समाप्त हो जाती है और खाया हुआ अन्न विष ही पैदा करता है। क्रोध से मोक्ष भी सम्भव नहीं। क्रोध को शीर्ण करने वाला ही '**धर्म-अर्थ-काम व मोक्ष**' रूप चारों पुरुषार्थों को सिद्ध करता है। क्रोध का शीर्ण करने वाले मशर्शर के ये ही चार पुत्र हैं, ये मुझे प्राप्त हों। यजुर्वेद में आया है-

ताऽउभौ चतुरः पदः सम्प्रसारयाव स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथां।
वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु।।

(यजु. २३-२०)

प्रभु से मिलकर मैं, प्रभुकृपा से '**धर्मार्थकाम-मोक्ष**' इन चार पुरुषार्थों को सिद्ध करूँ। अपने को स्वर्गलोक में स्थापित करूँ। '**वृषा, वाजी, रेतोधा**' प्रभु राजा व प्रजा में रेतस् का आधान करें अर्थात् प्रभु राजा व प्रजा को शक्तिशाली बनाएँ। यजुर्वेद (३२-९,१०) में परमात्मा को धाम अर्थात् घर, ज्योति एवं तृतीय धाम अर्थात् सत्वगुणी कहा है। महर्षि दयानन्द जी ने यजुर्वेद के एक मन्त्र (१७-७९) का भाष्य करते हुए सात धामों की चर्चा की है-

सप्त तेऽअग्ने समिधः सप्त जिव्हाः सप्तऽऋषयः सप्त धाम प्रियाणि।
सप्त होत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए जन्म, स्थान, नाम, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये सात धाम बताए हैं। सामवेद में धाम को परमात्मा की ज्योति व तेज कहा गया है-

ता वां सम्यगद्रुह्वाणेषमश्याम धाम च।
वयं वां मित्रा स्याम।।

(सा.९८६)

प्राण व अपान बड़े उत्तम प्रकार से किसी भी प्रकार द्रोह नहीं करते। इनकी साधना से हमारा नाश नहीं होता। हे प्रभु! हम आपकी स्फूर्ति व शक्ति को प्राप्त करें। आपकी साधना से हम अपने अन्दर शक्ति व स्फूर्ति को अनुभव करें। हमें अपने अन्दर थकावट अनुभव न हो और हम आपकी (धाम) ज्योति व तेज को (Light, Luster, Splendour) प्राप्त करें. अथर्ववेद (-९-१०-२१) में वेदवाणी को चार पुरुषार्थों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का प्रतिपादन करने वाली बताया है।

भारतीय संस्कृति में व्यक्ति की चतुर्दिक् उन्नति अर्थात् इस लोक एवं परलोक की उन्नति के लिए 'पुरुषार्थ-चतुष्टय' के कार्यान्वयन का आदेश दिया गया है। यह पुरुषार्थ-चतुष्टय ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष है। वेद, दर्शन, ब्राह्मण ग्रन्थ तथा रामायण एवं महाभारतादि अनेक ग्रन्थों में मानव का लक्ष्य इन्हीं चार पुरुषार्थों की प्राप्ति में बताया है। इसे चतुर्वर्ग नाम से भी जाना जाता है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, इस पुरुषार्थ-चतुष्टय को पूर्णरूप से समझने के लिए हम पण्डित रघुनन्दन शर्मा जी के ग्रन्थ 'वैदिक सम्पत्ति' से उनके विचार उद्धृत करना चाहते हैं।

thearyasamaj.org

वे इनकी बहुत ही सार्थक एवं सटीक और व्यवहारिक व्याख्या करते हुए लिखते हैं-'उन्होंने (आर्यों ने) अपना अन्तिम ध्येय मोक्ष को ही माना है। परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि मोक्ष भी इसी संसार के द्वारा ही प्राप्त होता है, इसलिए मुमुक्षु को इस संसार के तत्त्व का और उसके उचित उपयोग का ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य होता है। संसार का तत्त्वज्ञान और इसका उचित उपयोग ही मोक्ष का साधक है, इसलिए आर्यों ने संसार का उपयोग करते हुए मोक्ष प्राप्त करने की विधि को अपनी सभ्यता का मूल ठहराया है और उस विधि को चार भागों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के नामों से विभक्त किया है।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आर्यों की सभ्यता की आधार शिलाएँ हैं। इनमें मनुष्य की वे समस्त अभिलाषाएँ अन्तर्भूत हो जाती हैं, जिनका उल्लेख हमने वेदों के मन्त्र संग्रह के आदि में किया है। क्योंकि मनुष्य के शरीर में आवश्यकताओं को चाहने वाले चार ही स्थान हैं और ये चारों पदार्थ उनकी पूर्ति कर देते हैं। मनु महाराज अपने एक श्लोक में कहते हैं कि-

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेनशुध्यति।।

(मनुस्मृति)

अर्थात् पानी से शरीर, सत्य से मन, विद्या और तप से आत्मा तथा ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होती है। इस श्लोक में शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा की गणना अलग-अलग की गई है। हम देख रहे हैं कि इन चारों की जहाँ पानी आदि अलग-अलग चार पदार्थों से शुद्धि होती हैं, वहाँ इन शरीरादि चारों अंगों को अलग-अलग चार पदार्थों की आवश्यकता भी होती है। ये चारों आवश्यक पदार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ही हैं।

शरीर पोषण के लिए अर्थ की, मनस्तुष्टि के लिए काम की, बुद्धि के लिए धर्म की और आत्मा की शान्ति के लिए मोक्ष की आवश्यकता होती है। क्योंकि बिना धनादि (अर्थ) के शरीर निकम्मा हो जाता है, बिना भोजनादि (काम) के मन निकम्मा हो जाता है, बिना मोक्ष (अमरता) के आत्मा निकम्मा हो जाता है और बिना धर्म (सत्य और न्याय) के बुद्धि निकम्मी हो जाती है। अर्थ और शरीर का, काम और मन का तथा मोक्ष और आत्मा का सम्बन्ध तो प्रत्यक्ष ही है, इसमें किसी को शंका नहीं हो सकती, परन्तु धर्म और मन का, मोक्ष और आत्मा का सम्बन्ध तो प्रत्यक्ष ही है, इसमें किसी को शंका नहीं हो सकती, परन्तु धर्म और बुद्धि का सम्बन्ध सुनकर सम्भव है, लोग कहने लगे कि यह बात ठीक नहीं है। क्योंकि संसार के धर्मों को बुद्धि का साथ करते हुए नहीं देखा जाता। परन्तु हम जिस वैदिक धर्म की बात कर रहे हैं, उसकी दशा ऐसी नहीं है। वैदिक धर्म बुद्धिपूर्वक ही है। इसका कारण यही है कि वैदिक धर्म वेदों के द्वारा स्थिर किया गया है और वेद **'बुद्धिपूर्वा वाक्यकृतिर्वेदे'** अनुसार बुद्धिपूर्वक हैं, इसलिए इस धर्म पर वह शंका नहीं हो सकती। दूसरी बात यह है कि बुद्धि ज्ञान से सम्बन्ध रखती है। जैसे-जैसे ज्ञान की वृद्धि होती है, वैसे-वैसे ही बुद्धि का विकास होता है। इसलिए बुद्धि और ज्ञान एक ही वस्तु के दो विभाग हैं। क्योंकि देखा जाता है कि जैसे-जैसे ज्ञान की वृद्धि होती है वैसे ही वैसे धर्म की भी वृद्धि होती है। इसी सिद्धान्त पर पहुँचकर यूरोप का प्रसिद्ध विद्वान् हक्स्ले कहता है कि 'सच्चा विज्ञान और सच्चा धर्म दोनों यमज भाई हैं। इनमें से यदि एक-दूसरे से अलग कर दिया जायेगा, तो दोनों की मृत्यु हो जायेगी। विज्ञान में जितनी ही अधिक धार्मिकता होगी, उतनी ही अधिक उसकी उन्नति होगी। विज्ञान का अभ्यास करते समय मन की धार्मिक वृत्ति जितनी ही अधिक होगी, विज्ञानविषयक खोज उतनी ही अधिक गहरी होगी और उसका आधार जितना ही अधिक दृढ़ होगा, धर्म का विकास भी उतना ही अधिक होगा। तत्त्ववेत्ताओं ने जो अब तक बड़े-बड़े काम किए हैं, उन्हें सिर्फ उनके बुद्धिवैभव का ही फल न समझिए, किन्तु उनकी धार्मिक वृत्ति ही इसमें अधिक कारणभूत है। इसलिए धर्म का ज्ञान के साथ और ज्ञान का बुद्धि के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है, इसमें सन्देह नहीं।'

जिसप्रकार धर्म का बुद्धि से सम्बन्ध है, उसी तरह अर्थ से शरीर का, काम से मन का और मोक्ष से आत्मा का भी सम्बन्ध है। इन्हीं धर्म, अर्थ, कामादि में मनुष्य के जीवन, भोग, मान, ज्ञान, न्याय और परलोक आदि की समस्त कामनाओं का समावेश हो जाता है, अर्थात् जीवन की अभिलाषा अर्थ में, भोगादि काम में, मान, ज्ञान और न्याय की धर्म में और परलोक की कामना मोक्ष में समा जाती है। अर्थात् समस्त एषणाओं का समावेश धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में हो जाता है और चारों पदार्थ एक दूसरे के आधार आधेय बन जाते हैं। जिस प्रकार अर्थ अर्थात् धनादि के बिना शरीर की स्थिति नहीं रह सकती और न काम अर्थात् भोगादि के बिना सुख नहीं हो सकता है और न बिना शरीर और शरीर निर्वाह के मोक्षसाधन ही हो

thearyasamaj.org

सकता है, उसी तरह बिना मोक्षसाधन के, बिना मोक्षमार्ग निर्धारण किए अर्थ और काम को भी सहायता नहीं मिल सकती। क्योंकि अर्थ और काम के समस्त पदार्थ प्राय: मनुष्यों, पशुओं और वनस्पतियों से ही प्राप्त होते हैं। ये सभी जीवन हैं और कर्मफल भोग रहे हैं। इनका भी उद्धार तभी हो सकता है, जब ये कर्म फल भोग कर मनुष्य शरीर में आवें और यहाँ मोक्ष का मार्ग खुला हुआ पावें। इसलिए मोक्ष की सच्ची कामना से ही अर्थ और काम को अर्थात् मनुष्यों और वनस्पतियों को सहायता मिल सकती है। मोक्ष की सच्ची कामना के बिना अर्थ और काम का उचित उपयोग हो ही नहीं सकता और बिना उचित उपयोग के अर्थी स्वार्थी हो जाते हैं और कामना वाले लोभी हो जाते हैं तथा स्वार्थी और लोभी मिलकर समाज को नष्ट कर देते हैं।

इसलिए कहा है कि मोक्ष से अर्थ और काम को सहायता मिलती है। किन्तु प्रश्न यह होता है कि अर्थ काम से मोक्ष को और मोक्ष से अर्थ काम को परस्पर उचित सहायता दिखाने वाला नियम कौन सा है? इसका उत्तर स्पष्ट है कि अर्थ, काम और मोक्ष में सामंजस्य उत्पन्न करने वाला धर्म है। धर्मपूर्वक मोक्ष साधन से अर्थ और काम की उचित व्यवस्था हो जाती है और धर्म पूर्वक अर्थ, काम को ग्रहण करने से मोक्ष सुलभ हो जाता है। इस प्रकार से ये चारों पदार्थ एक दूसरे के सहायक हो जाते हैं। यद्यपि ये चारों पदार्थ परस्पर एक दूसरे के सहायक हैं और अपने-अपने कार्य में चारों बड़े महत्त्व के हैं, पर चारों में मोक्ष का स्थान सबसे ऊँचा है । मोक्ष की महत्ता का कारण मृत्यु के दु:खों से छूट जाना है। मनुष्य की समस्त अभिलाषाओं में दीर्घातिदीर्घ जीवन की अभिलाषा ही सर्वश्रेष्ठ है। जिन्दगी के मुकाबले में मनुष्य अर्थ,काम, मान, न्याय और ज्ञान की परवाह नहीं करता। इस बात का प्रमाण मरने के समय ही मिलता है। इसलिए जिस साधन से मृत्यु का भय सदैव के लिए दूर हो जाए-जिसके प्राप्त हो जाने पर मृत्यु के कारण रूप इस जन्म ही का अभाव हो जाए-उस मोक्ष की समता कौन कर सकता है? यही कारण है कि आर्यों ने अपनी सभ्यता को मोक्ष प्राप्ति के उच्च आदर्श पर स्थिर किया है और केवल धर्मपूर्वक प्राप्त अर्थ और काम को ही उसका सहायक माना है,धर्मविरुद्ध को नहीं। धर्मपूर्वक अर्थ और काम का ग्रहण करके मोक्ष प्राप्त करने के लिए ही आर्यों को अपना जीवन धार्मिक बनाने की शिक्षा दी गई है। इसलिए वे ब्रह्मचर्याश्रम से लेकर संन्यास पर्यन्त सन्ध्योपासन, प्राणायाम और योगाभ्यास द्वारा अपने जीवन को मोक्षाभिमुखी बनाते हैं।

वास्तविकता यह है कि वैदिक-संस्कृति में व्यक्ति का लक्ष्य इन्हीं चार सिद्धियों को प्राप्त करना अनविार्य रूप से सुनिश्चित् किया गया था यही कारण है कि आयुर्वेद में जहाँ शरीर की बात की है वहाँ यह भी कहा गया है-

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्।।

अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सभी पुरुषार्थों का उत्तम मूल आरोग्य ही है। इन चार पुरुषार्थों का महत्त्व एवं अनिवार्यता इस बात से भी स्पष्ट होती है कि भारतीय मनीषियों ने इतिहास की व्याख्या भी इस प्रकार से की है-

धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम्।
पूर्ववृत्तकथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते।।

अर्थात् जिसमें पूर्ववृत्त (प्राचीन काल में घटित घटनाओं का) वर्णन धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में उपदेश-सहित कथन किया गया हो, उसे इतिहास कहते हैं। विष्णु पुराण (३-१८-३१) में भी धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष को ही चार पुरुषार्थ कहा गया है-**धर्मार्थकाममोक्षाश्च पुरुषार्था उदाहृता।** महाभारत में धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को ही जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में कह गया है-

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।

(आदि पर्व २-२०)

हे भरतश्रेष्ठ! धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सम्बन्ध में जो बात इस ग्रन्थ में है, वही अन्यत्र भी है, जो इसमें नहीं है, वह कहीं भी नहीं है।

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी आदेश देते हैं- 'वेद और अग्नि आदि पदार्थों से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करें तथा अनेक प्रकार से शिल्पविद्या की उन्नति करो' (वेदोक्त धर्मविषय)। अपने ग्रन्थ स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में वैदिक सिद्धान्तों की चर्चा करने के बाद लिखते हैं- सर्वसत्य का प्रचार कर, सबको एक्यमत में करा, द्वेष छुड़ा, परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके, सबसे सबको सुख-लाभ पहुचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है। सर्वशक्तिमान् परमात्मा की कृपा, सहाय और आप्तजनों की सहानुभूति से यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे। जिससे सब लोग सहज से धम्मार्थ-काम-मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नति और आनन्दित

thearyasamaj.org

होते रहें। यही मेरा मुख्य प्रयोजन है। अपने ग्रन्थ व्यवहारभानु के आरम्भ में ही वे मनुष्यों को अच्छी शिक्षा से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष फलों की सिद्धि मिलने की बात कहते हैं। अपने वेदभाष्य में महर्षि दयानन्द जी ने अनेक मन्त्रों के भावार्थ करते हुए धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष की सिद्धि की चर्चा की है। इस सम्बन्ध में यजुर्वेद १२-७६, ७९ तथा १३-४६ और १५-४४ भी द्रष्टव्य हैं। सत्यार्थप्रकाश के चौथे समुल्लास में गृहस्थ प्रकरण के अन्तर्गत वे अतिथि सेवा के सम्बन्ध में लिखते हैं- '...सत्संग कर उनसे ज्ञान-विज्ञान आदि, जिनसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होवे, ऐसे -ऐसे उपदेशों का श्रवण करे' सन्ध्या में नमस्कार मन्त्र से पूर्व 'समर्पण-मन्त्र' में साधक जिन वस्तुओं की शीघ्र सिद्धि चाहता है, उसे महर्षि दयानन्द जी ने इस प्रकार से व्यक्त किया है-

'हे ईश्वर। दयानिधे। भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।।'

अर्थात् हे परमेश्वर दयानिधे। आपकी कृपा से जपोपासनादि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त होवें। महर्षि जी अपने ग्रन्थ 'संस्कार-विधि' की भूमिका के अन्त में लिखते हैं- 'इसमें प्रथम ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना, पुनः स्वस्तिवाचन, शान्तिपाठ, तदनन्तर सामान्यप्रकरण, पश्चात् गर्भाधानादि अन्त्येष्टिपर्यन्त सोलह संस्कार क्रमशः लिखे हैं और यहाँ सब मन्त्रों का अर्थ नहीं लिखा है, क्योंकि इसमें कर्मकाण्ड का विधान है, इसलिए विशेषकर क्रिया-विधान लिखा है और जहाँ-जहाँ अर्थ करना आवश्यक है, वहाँ-वहाँ अर्थ भी कर दिया है और मन्त्रों के यथार्थ अर्थ मेरे किए वेदभाष्य में लिखे ही हैं, जो देखना चाहें ,वहाँ से देख लेवें। यहाँ तो केवल क्रिया करनी ही मुख्य है, **जिसे करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त हो सकते हैं, और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं, इसलिए संस्कारों का करना सब मनुष्यों को अति उचित है।**

-महादेव, सुन्दर नगर-१७४४०१ हि.प्र.

वैदिक साहित्य पर विशेष छूट

दानी महानुभावों के विशेष सहयोग से वैदिक पुस्तकालय, अजमेर द्वारा प्रकाशित रु. १६३५/- मूल्य की निम्न पुस्तकों का एक सैट ग्राहकों को आधे मूल्य (५० प्रतिशत) में अर्थात् रु. ८१७/- में दिया जा रहा है। पुस्तकों को डाक द्वारा मँगाने पर डाक व्यय के रु. १८३/- अतिरिक्त सहित कुल राशि रु. १०००/- में ग्राहकों को देय होगा।

पुस्तकों के सैट उपलब्धता रहने तक प्राथमिकता के आधार पर देय होंगे।

क्र. सं.	पुस्तक सं.	पुस्तक का नाम	मूल्य
१.	१२	ऋग्वेद भाषा भाष्य-१२ पुस्तक-१ सैट	६१०.००
२.	२	यजुर्वेद भाषा भाष्य-२ पुस्तक-१ सैट	४७५.००
३.	३	दयानन्द ग्रन्थमाला-३ पुस्तक- १ सैट	५५०.००
	१७	योग	१६३५.००

पुस्तकें मँगाने हेतु धनराशि-एम.ओ., डिमाण्ड ड्राफ्ट या ऑनलाईन द्वारा

खातेदार-वैदिक पुस्तकालय, अजमेर

बचत खाता संख्या- 0008000100067176,

बैंक- पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर

आई.एफ.एस.सी. संख्या PUNB 0000800 के द्वारा भेज सकते हैं।

जिस यज्ञ से सब सुख होते हैं उसका अनुष्ठान सब मनुष्यों को क्यों न करना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६०

thearyasamaj.org

स्तुता मया वरदा वेदमाता-२

अथर्ववेद के इन मन्त्रों में जो चर्चा की गई है, वह सहज और स्वाभाविक है। आज विज्ञान की प्रगति से नित नये-नये आविष्कारों को देखकर हम समझते हैं कि संसार में समस्याओं के समाधान का प्रयास सम्भवत: प्रथम बार हो रहा है। यह बात इस कारण सत्य नहीं हो सकती क्योंकि समस्या नई नहीं है। मनुष्य के साथ ये समस्याएँ उसके प्राणी या मनुष्य होने के कारण हैं और मनुष्य के रूप में उसका अस्तित्व नया नहीं है क्या फिर उसकी समस्याओं ने मनुष्य को समस्याओं के समाधान खोजने के लिए प्रेरित नहीं किया होगा। आज जिसे हम विज्ञान का आविष्कार कहते हैं, वह केवल प्रकृति के नियमों का बोध ही तो है। इन नियमों को जानकर अपनी बुद्धि से उनका उपयोग करना ही आविष्कार है। जब प्रकृति पुरानी है और जीवन भी पुराना है तो दोनों के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयास भी उतना ही पुराना है।

मनुष्य के रूप में जन्म, शैशव, बाल्यावस्था, युवावस्था, वार्धक्य और मृत्यु यह क्रम सतत चल रहा है। इसको हम नहीं बदल सकते। प्रत्येक प्राणी की यही नियति है। प्राणियों के जन्म-मृत्यु का एक क्रम है जिसमें मनुष्यों की ही नहीं सभी प्राणियों की भागीदारी है। इस जन्म-मृत्यु के क्रम में कोई माता बन कर, कोई पिता बन कर, कोई पोषक बनकर एक-दूसरे की सहायता कर रहा है। इस सहायता क्रम की प्रत्येक प्राणी के जन्म के साथ निरन्तर आवृत्ति होती रहती है। आवृत्ति में एक-दूसरे का सम्बन्ध असंख्य प्रकार से बनता-बिगड़ता रहता है। इस सम्बन्ध का सर्वोत्तम प्रकार क्या है, यही जानना हमारे जीवन की सफलता का आधार है। इस सर्वोत्तम उपाय को बताना ही वेद का प्रयोजन है। इसके साधन रूप गुरु, विद्वान्, सन्तजन, माता-पिता अपने ज्ञान और बुद्धि के अनुसार अपने से जुड़े लोगों को बताते रहते हैं। जो लोग प्रकृति से नियमों को समझते हैं वे भी इन बातों को अपने आगे वालों को बताते हैं, जो वेद को समझते हैं, वे भी इन प्राकृतिक नियमों को अपने आगे आने वालों को समझाते हैं। अथर्ववेद में इस प्रकार के मन्त्र बहुश: मिलते हैं। इस क्रम में अथर्ववेद के तीसरे काण्ड के ३०वें सूक्त के विचार भी मनन करने योग्य हैं। इस सूक्त में सात मन्त्र हैं। प्रथम मन्त्र के प्रमुख शब्द हैं **'सहृदयम् सामनस्यम्, अविद्वेषम्।'** इन तीन शब्दों का अर्थ समझने से मन्त्र का भाव स्पष्ट होता है। इनमें दो शब्द सहृदय और सामनस्यम्, करने की बात को इंगित करते हैं। अविद्वेषम् शब्द हमारी नकारात्मक सोच को हटाने की बात करता है। मन्त्र की तीनों बातें मनुष्य के स्वभाव से सम्बन्ध रखती हैं। मनुष्य समाज में, दूसरे के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया से जुड़ा रहता है। जो उसे अच्छा लगता है उसकी इच्छा करता है जो बुरा या दु:ख देने वाला लगता है उससे वह दूर भागना चाहता है।

इस अनुकूलता-प्रतिकूलता को समझने के लिए यह समझना उचित होगा कि कौन-सी बात मनुष्य को प्रसन्नता देती है और कौन-सी बात दु:ख देती है। सुख-प्राप्ति की प्रथम कसौटी द्वेष का अभाव है। द्वेष को दूर किये बिना किसी के प्रति प्रसन्नता या प्रेम करना सम्भव नहीं है। द्वेष का क्षेत्र बहुत बड़ा हो सकता है परन्तु संक्षेप में कह सकते हैं जिससे मनुष्य दु:खी होने की कल्पना करता है और उसको हटाने का प्रयास करता है उसे द्वेष समझा जायेगा। यह मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। यहाँ हमारे मन में सन्देह उत्पन्न होता है कि दु:ख भी स्वाभाविक है फिर सुख भी स्वाभाविक है यह कैसे सम्भव है, सुख और दु:ख अनुभव का विषय है, फिर अनुभव चेतन का धर्म है, अत: दोनों का परिणाम चेतन पर ही पड़ेगा। बहुत बार लगता है कि ये सुख-दु:ख कब उचित होते हैं, कब अनुचित। इसका समाधान है शरीर प्रकृति के साधनों से घटता-बढ़ता है, शरीर की अनुकूलता सुख है और शरीर की प्रतिकूलता दु:ख। शरीर इन्द्रिय मन बुद्धि तक मनुष्य की सब प्राकृतिक पदार्थों में रुचि रहती है

अत: आत्मा को प्रकृति में सुख का अनुभव होता है। आत्मा के गुण सामनस्य और सहृदयता द्वेष के अभाव में ही सुख दे सकते हैं। मन अपने प्राकृतिक साधनों की बाधाओं को दूर करना चाहता है अतएव मनुष्य सांसारिक पदार्थों की कामना करता है। उन में रुकावट होने पर मनुष्य के मन में द्वेष का भाव आता है, उसे दूर करना आवश्यक है।अत: मन को अविद्वेषम्- बनाये बिना सहृदयम् और सामनस्यम् नहीं बनाया जा सकता है।

क्रमश: ......

thearyasamaj.org

जिज्ञासा समाधान - ७९

- आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा- मन और उसका बल- कहते हैं कि मन बड़ा बलवान है, वही सब अच्छे बुरे काम करवाता है। गीता में कहा है-

''मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:।''

मन ही हाथी पर बैठाता है और वही गधे की सवारी करवाता है। मन ही राजा-रंग बनाता है। दुनिया में बड़े-बड़े योद्धा, महाबली हुए, जो विश्व विजयी कहलाएँ। मन के कारण ही दुनिया की जेल अपराधियों से भरी हुई है। मन ही योगी और भोगी बनाता है। मन बड़ा बलवान है। किन्तु जो मनोजयी हो जाते हैं, वे लोग कुछ भी करने में समर्थ होते हैं। दूसरी तरफ कहते हैं, मन जड़ है। उसको पकड़ कर मनुष्य कुछ भी प्राप्त कर सकता है। इसीलिए दुनिया में तपस्वी लोग तप करके मन को जीतने का प्रयत्न करते हैं। एक कहावत है- 'मन लोभी, मन लालची, मन चंचल, मन चोर, मन के पते न चाहिए, पलक-पलक मन और' यह बात बिल्कुल सही है। इसीलिए मनोजयी, मनस्वी लोगों ने दुनिया में राज किया, बाकी के जिन्दगी को भार समझ कर ढ़ोते रहे।

फिर क्या करें इस मन का? जो मन जड़ है, उसकी इतनी ताकत कहाँ से आई। बेशक मन जड़ है किन्तु चैतन्य के सहारे वह चलता है। मनुष्य के अन्दर बैठी अन्तरात्मा ही सब कुछ करवाती है। उस अन्तरात्मा में इतनी शक्ति कहाँ से आई इसका उत्तर है- ईश्वर से। कहते हैं अन्तरात्मा=जीवात्मा परमात्मा का अंश है। साधना करो, परमात्मा का साक्षात्कार हो जाएगा। मनुष्य सबसे बड़ा बलवान हो जाएगा। बेचारे जड़ मन की क्या औकात! इसीलिए कहते हैं, मनोजयी बनो। ईश्वर को प्राप्त करो। क्या सत्य है? इसी पर विचार करना है, यही है एक जिज्ञासा एक और बात मनुष्य बेचारा बड़ी उलझन में फंसा है। ईश्वर को न मानने वाले भी खुश हैं, फिर यह ईश्वर कहाँ से बीच में आ गया। बड़े-बड़े नास्तिक भी मस्त हैं, ईश्वर की सत्ता को न मानकर, फिर भी ईश्वर उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकता। यह भी देखने में आता है। तो फिर ईश्वर की क्या हस्ति है, यही है जिज्ञासा। इसका समाधान चाहिए।

- डॉ. एस.एल. बसन्त, बी-१३८४, नागपाल स्ट्रीट, फाज़िलका, पंजाब

समाधान- निश्चित रूप से मनुष्य का मन बड़ा बलवान है। मन के कारण ही आत्मा महान व निम्न कोटि का बनता है। मन के कारण आत्मा परमेश्वर का साक्षात्कार कर सकता है और मन के कारण ही अनेकों सृष्टियों में दु:ख भोगता फिरता है।

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:

मन ही मनुष्यों के बन्धन और मोक्ष का कारण है। मन के विषय में इतना सब लिखा होने पर भी हम आपको बता दें कि मन कर्त्ता नहीं है, मन करण है, साधन है। और जो आपने ऊपरोक्त श्लोकांश को गीता का कहा है सो गलत है। हम पहले भी जिज्ञासा समाधान में इसका पता दे चुके हैं, अब पुन: लिख रहे हैं, चाणक्य नीति अ. १३ श्लोक ११ और यही श्लोकांश पंक्तिविपर्यय से मैत्रायण्युपनिषद् ६.३४ में मिलता है। अब आपकी जिज्ञासा पर आते हैं, हमने कहा मन कर्त्ता नहीं है अपितु करण है। जहाँ कहीं मन को कर्त्ता कहा है वा कहा जाता है वह गौण रूप से कहा है, कहा जाता है। मन एक जड़ वस्तु है, इसका उपयोग चेतन आत्मा करता है। मन के अन्दर परमेश्वर ने सामर्थ्य बहुत अधिक रख रखा है। जो आत्मा जितना ज्ञानी है वह मन का उतना प्रयोग कर पाता है। जैसे किसी मशीन में अनेक कार्य करने के कलपुर्जे किसी शिल्पी ने लगाये हैं। वह शिल्पी इस मशीन से होने वाले सभी कार्यों से परिचित है वह इससे अनेकों काम ले लेता है किन्तु जो सभी कामों की क्षमता को नहीं जानता वह उससे एक दो काम ही ले पाता है। वैसे मन के विषय में जानें।

मन को बहुत सामर्थ्य युक्त परमेश्वर द्वारा बनाया हुआ होने पर भी, मन से आत्म एक समय में एक ही काम ले सकता। क्योंकि परमेश्वर ने इसको बनाया ही ऐसा है। हमें जो एक समय में इसके द्वारा अनेक कार्य होते दिखाई देते हैं, वे इसलिए क्योंकि परमात्मा ने इसको बहुत तीव्र गति वाला बनाया है। इसकी गति इतनी तीव्र है कि हम समय को नहीं पकड़ पाते, हाँ विद्वान् साधक योगी व्यक्ति तो इसकी गति को समझ, पकड़ लेते हैं। जैसे हमें कमल के सौ पत्तों की तह में सुई से एक साथ छेद होता दिखाई देता है, वैसे मन से अनेक कार्य होते दिखते हैं। इसमें यदि ध्यानपूर्वक देखा जाये तो पता लगता है जैसे कमलपत्र एक

thearyasamaj.org

साथ छिदते दिखते हुए भी एक साथ, एक बार में नहीं छिदते अपितु ऊपर एक-एक पत्ते में क्रम से छेद होता है। वैसे ही मन से एक साथ अनेक कार्य एक साथ होते दिखते हुए भी एक साथ, एक बार न होकर क्रमशः होते हैं।

आत्मा मन से बहुत से कार्य लेता रहता है, जब जो कार्य लेता तब मन को उस नाम से भी कह दिया जाता है। शतपथ ब्राह्मण में वे कार्य व नाम मन के कहे हैं-

'कामः संकल्पो विचिक्त्सा श्रद्धाऽश्रद्धा धृतिरधृतिर्ह्रीर्धीर्भीरित्येतत् सर्वं मन एव तस्मादपि पृष्ठत उपस्पृष्टो मनसा विजानाति।'

- श.कां. १४.४.३.९

कामः- प्रथम विचार ही करके सब उत्तम व्यवहारों का आचरण करना और बुरों को छोड़ देना इसका नाम काम है।

संकल्पः- जो सुख और विद्यादि शुभ गुणों को प्राप्त होने के लिए प्रयत्न से अत्यन्त पुरुषार्थ करने की इच्छा है उसको संकल्प कहते हैं।

विचिकित्सा- जो-जो काम करना हो उस-उस को प्रथम शंका कर-करके ठीक निश्चय करने के लिए जो सन्देह करना है, उसका नाम विचिकित्सा है।

श्रद्धा- जो ईश्वर और सत्यधर्म आदि शुभ गुणों में निश्चय से विश्वास को स्थिर रखना है, उसको श्रद्धा जानना।

अश्रद्धा- अर्थात् अविद्या, कुतर्क, बुरे काम करने, ईश्वर को नहीं मानने और अन्याय आदि अशुभ गुणों से सब प्रकार से अलग रहने का नाम अश्रद्धा समझना चाहिए।

धृतिः- जो सुख-दुःख, हानि-लाभ आदि के होने में भी अपने धीरज को न छोड़ना, उसका नाम धृति है।

अधृतिः- बुरे कामों में दृढ़ न होने को अधृति कहते हैं।

ह्रीः- अर्थात् जो झूठे आचरण करने और सच्चे कामों को नहीं करने में मन को लज्जित करना है, उसको ह्रीः कहते हैं।

धीः- जो श्रेष्ठ गुणों को शीघ्र धारण करने वाली वृत्ति है उसको धीः कहते हैं।

भीः- जो ईश्वर की आज्ञा अर्थात् सत्याचरण धर्म करना और उससे उलटे पाप के आचरण से नित्य डरते रहना, अर्थात् ईश्वर हमारे सब कामों को सब प्रकार से देखता है, ऐसा जानकर उससे सदा डरना, कि मैं जो पाप करूँगा तो ईश्वर मुझ पर अप्रसन्न होगा, इसको भीः कहते हैं। इत्यादि गुण वाली वस्तु का नाम मन है। (महर्षि दयानन्द ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका) ये इतने सारे कार्य मन के हैं जो व्यक्ति जितना विवेकी होता है वह मन को नियन्त्रित कर ये सब कार्य कर परमेश्वर को प्राप्त हो आनन्द में रहता है। विवेक शून्य व्यक्ति मन से ये कार्य न कर दुःख भोगता रहता है।

मन प्रकृति से निर्मित होने से जड़ है और आत्मा को ज्ञान कराने में प्रमुख साधन है। इन्द्रिय और आत्मा के मध्य में मनन हो तो आत्मा को बाह्य जगत् का कोई ज्ञान न हो सकेगा। क्यों न आँख खुली हुई हो, किसी रूप की ओर हो किन्तु आँख का सम्बन्ध जब तक मन से नहीं होगा तब तक आत्मा को रूप का ज्ञान भी नहीं होगा। इसीप्रकार अन्य विषयों के सम्बन्ध में जानें। जब व्यक्ति को यह निश्चय हो जाता है कि मन जड़ वस्तु है इसको चलाने वाला मैं हूँ तब वह मनोजयी होने लगता है और मनोजयी व्यक्ति अपने मन को किसी भी विषय में सरलता से हटा सकता है तथा किसी भी विषय में लग सकता है। ऐसा मनोजयी व्यक्ति संसार पर राज करे न करे किन्तु संसार के विषयों पर अवश्य राज करता है। आपने कहा फिर क्या करें मन का, तो ऋषि कथनानुसार इस जड़ मन को प्रतिपल धर्म में लगाये रखे यही तो करना है। अपने कर्त्तव्य में लगाए रखें, आत्मोन्नत्ति में लगाए रखे, इसके अभ्यास में मन को लगाए रखें। आप कहते हैं कि इस जड़ मन में इतनी ताकत कहाँ से आई? इस विषय में हमने ऊपर लिखा कि अनेक सामर्थ्य युक्त इसको परमात्मा ने बनाया है।

इस जड़ मन को आत्मा चलाता है। आत्मा के पास अपना सामर्थ्य होते हुए उसके पास अतिरिक्त ताकत परमेश्वर से आयी, जैसे-जैसे आत्मा सत्यधर्मयुक्त होकर पुरुषार्थ करता है परमेश्वर उसको वैसे-वैसे विवेक, बलादि सामर्थ्य देता है। उसी ज्ञान, बल आदि से आत्मा अपने मन को पूर्ण नियन्त्रित कर लेता है, कर सकता है। "आपने कहा जीवात्मा परमात्मा का अंश ही है" यह आपका कथन सिद्धान्त विरुद्ध है, वेद की मान्यता के प्रतिकूल है। जीवात्मा परमात्मा का अंश नहीं है अपितु इसकी अपनी स्वतन्त्र सत्ता है। जैसे परमेश्वर की स्वतन्त्र सत्ता है वैसी आत्मा की स्वतन्त्र सत्ता है। यदि आत्मा को परमात्मा का अंश मानेंगे तो आत्मा में भी परमात्मा वाले, ज्ञान, आनन्द, निर्भयता, सर्वज्ञता आदि गुण होने चाहिए जो कि इसमें नहीं हैं। अंश में अंशी के गुण अवश्य होते हैं। यदि आत्मा परमात्मा का

thearyasamaj.org

अंश होता तो ऊपरोक्त परमात्मा के गुण आत्मा में भी होते। वेद का सिद्धान्त त्रैतवाद का है अर्थात् ईश्वर, जीव, प्रकृति ये तीनों पृथक्-पृथक् हैं और अनादि हैं। अद्वैत के निषेध और त्रैत की स्थापना के लिए महर्षि दयानन्द का सत्यार्थ-प्रकाश समु. ७-९ व ११वें को देखें, वहाँ महर्षि ने विस्तार से वेदानुकूल त्रैतवाद की मान्यता को रखा है।

अब रही ईश्वर को मानने वाले भी खुश और नास्तिक भी खुश वाली बात। इस विषय में हम आपको बता दें दोनों अन्तर स्पष्ट हैं। जितना ईश्वर को मानने वाला निर्भय, शान्त, आनन्दयुक्त, धार्मिक, न्यायप्रिय, परोपकारी, सेवा करने वाला, शिष्टाचारी, सभ्य मिलेगा उतना नास्तिक कभी नहीं हो सकता। भले ही सामान्य रूप से नास्तिक व्यक्ति ऊपर से प्रसन्न दिखता हो किन्तु यथार्थ में वह प्रसन्नता उसके पास नहीं होती जो प्रसन्नता सच्चे वेदोक्त ईश्वर को मानने वाले को होती है। यदि वह यथार्थ में प्रसन्न है तो वह उसकी प्रसन्नता उसके पुरुषार्थ के कारण है, जो की यह पुरुषार्थ करने की आज्ञा परमेश्वर की है। उसकी प्रसन्नता में मूल कारण तो परमेश्वर ही है।

प्राय: नास्तिक व्यक्ति इस शरीर को वर्तमान संसार तक सीमित रहता है। इसी वर्तमान शरीर को लेकर उसका कार्य व्यवहार होता है। ऐसी स्थिति में नास्तिक व्यक्ति अपने शरीर की पालना के लिए अधर्म अधिक करता है। जिससे वह भले ही प्रारम्भ में प्रसन्न दिखे किन्तु अन्त उसका दु:खमय ही होता है। इसके विपरीत ईश्वर को मानने वाला इस लोक और परलोक दोनों को देखकर चलता है, जिसे उसका कार्य व्यवहार धर्ममय होता है। धर्ममय कार्य होने से ईश्वर भक्त को भले वर्तमान में कुछ कष्ट दिखते हों किन्तु उसका परिणाम सुखमय ही होता है। उस परिणाम को विचार कर आस्तिक व्यक्ति वर्तमान के कष्ट में भी नहीं घबराता, इसलिए ईश्वर को मानने की आवश्यकता है। ईश्वर की हस्ति को मानने से व्यक्ति पूर्ण दु:ख से निवृत्त हो जाता है न मानने से दु:ख पीछे लगे ही रहते हैं, इसलिए ईश्वर की बड़ी हस्ति है। अस्तु।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

सत्यार्थ प्रकाश का प्रचार प्रसार

गत विश्व पुस्तक मेले में सभा द्वारा पांच हजार सत्यार्थप्रकाश (हिन्दी), दो हजार सत्यार्थप्रकाश (अंग्रेजी), ऋषि दयानन्द की जीवनी पाँच हजार, दो हजार सी.डी. का नि:शुल्क वितरण किया। जिसकी सज्जनों द्वारा बहुत प्रशंसा की गई। अब सज्जनों का फिर उसी प्रकार के कार्यक्रम की मांग कर रहे हैं।

इस बार सभा ने कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए सत्यार्थप्रकाश को चार भाषाओं में वितरित करने की योजना बनाई है, क्रमश: हिन्दी, अंग्रेजी, पंजाबी, उर्दू का सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन की प्रक्रिया में है।

ऋषि जीवनी भी अंग्रेजी, हिन्दी दोनों भाषाओं में तैयार कराई जा रही है। सभी धर्मानुरागियों से निवेदन है, इस कार्य के लिए आप जितना अधिक सहयोग प्रदान करेंगे। सभा उतने ही विशाल रूप में इस कार्यक्रम को सम्पन्न करेगी। पूर्व की भाँति आपका सहयोग व समर्थन प्राप्त होगा।

सहयोग राशि निम्न क्रमांक के खातों में जमा कराई जा सकती है अथवा बैंक ड्राफ्ट, चेक द्वारा प्रेषित कर कार्यालय में जमा कराई जा सकती है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-09110400005753 0 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर। IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर। IFSC - SBIN0007959

जो ईश्वर वेदविद्या से अपने सांसारिक जीवों और जगत् के गुण, कर्म्म, स्वभावों को प्रकाशित न करता तो किसी मनुष्य को विद्या और इन का ज्ञान न होता और विद्या वा उक्त पदार्थों के ज्ञान के बिना निरन्तर सुख क्यों कर हो सकता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५४

तर्क के बिना कोई भी विद्या किसी मनुष्य को नहीं होती और विद्या के बिना पदार्थों से उपयोग भी कोई नहीं ले सकता।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५६

thearyasamaj.org

१६ से ३० दिसम्बर २०१४

(१) यज्ञ एवं प्रवचन- परमपिता परमेश्वर की कृपा से, सभा कार्यकर्त्ताओं के पुरुषार्थ से व आप सभी के सहयोग से पिछले दिनों भी सभा की सभी गतिविधियाँ यथा प्रातः सायं यज्ञ, प्रवचन, गुरुकुल, अतिथियों आश्रमवासियों के लिए भोजन, गौशाला, चिकित्सालय, परोपकारी पत्रिका व अन्य ग्रन्थों का प्रकाशन, जनसम्पर्क व प्रचार कार्यक्रम आदि यथावत चलती रही।

अपने प्रात:कालीन प्रवचन के क्रम में **स्वामी ध्रुवदेव जी** ने ईश्वर, जीव, प्रकृति आदि आध्यात्मिक विषयों पर अपने विचार रखें। स्तुति-प्रार्थना-उपासना की व्याख्या करते हुए आपने बताया कि कई बार परमात्मा की स्तुति करने वालों पर, लम्बे समय से स्तुति करते रहने पर भी कोई सकारात्मक परिणाम दिखाई नहीं देता है अर्थात् स्तोता में अनेक दोष जस के तस बने रहते हैं। इसी प्रकार प्रार्थना और उपासना में भी होता है। स्तुति-प्रार्थना-उपासना के फलयुक्त, परिणाम देने वाले न होने के पीछे मुख्यतया दो कारण होते हैं- पहला स्तोता/प्रार्थी/उपासक के आचरण का शुद्ध नहीं होना और दूसरा उसकी तत्कर्म सम्बन्धी विधि का ठीक न होना। आचरण की शुद्धता के विषय में आपने बताया कि यम-नियम के पालन से ही आचरण की शुद्धता होती है। आसन, प्राणायाम, धारणा ध्यान आदि योगाङ्ग उपासना की विधि की व्याख्या करते हैं। जैसे विधिपूर्वक पौधे की रक्षा करने पर, समय-समय पर खाद, पानी देने पर एक दिन वह विशालकाय पेड़ बन जाता है, जैसे विधिपूर्वक किया गया यज्ञ विशेष फल देता है वैसे ही विधिपूर्वक की गई स्तुति-प्रार्थना-उपासना भी फलदायक होती है। प्रार्थना की व्याख्या में आपने बताया कि प्रार्थना से व्यक्ति निरभिमानी बनता है, उसमें उत्साह आता है और ईश्वर से सहायता मिलती है। अर्योद्देश्यरत्नमाला में महर्षि दयानन्द ने प्रार्थना से विज्ञान की प्राप्ति भी एक फल बताया है। 'विज्ञान की प्राप्ति' की व्याख्या करते हुए आपने बताया कि जब व्यक्ति किसी गुण को अपने में लाने के लिए या दोष को दूर करने के लिए पुरुषार्थ पूर्वक प्रार्थना करता है तो ईश्वर से उसे उस गुण/दोष सम्बन्धी विज्ञान की प्राप्ति होती है और उस विज्ञान की सहायता से व्यक्ति अपने कार्य में सफल हो जाता है। पुनः उपासना के फल के विषय में आपने बताया कि ठीक प्रकार से की गई उपासना से आत्मा व अन्त:करण पवित्र होते हैं और उपासक का मुक्ति पर्यन्त ज्ञान बढ़ता ही जाता है। महर्षि दयानन्द, सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखते हैं कि "जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है, वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष, दु:ख छूट कर परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण-कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। इसलिए परमेश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना अवश्य करनी चाहिए। इससे इसका फल पृथक् होगा परन्तु आत्मा का बल इतना बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दु:ख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है?"

२३ दिसम्बर को सायंकालीन प्रवचन सत्र में **स्वामी श्रद्धानन्द** जी को श्रद्धाञ्जली अर्पित की गई। **ब्र. रामदयाल जी** व **ब्र. नितिन जी** ने स्वामी जी विषयक सुमधुर भजन प्रस्तुत किए तो **ब्र. सत्यवीर जी** ने अपने वक्तव्य के माध्यम से स्वामी श्रद्धानन्द जी को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। २३ दिसम्बर के ही दिन १९२६ को अब्दुल रशीद नामक एक मुस्लिम धर्मान्ध युवक ने दिल्ली में स्वामी जी की गोली मारकर हत्या कर दी थी।

"स्वामी श्रद्धानन्द जी का जन्म पंजाब के जालन्धर जिले के तलवन कस्बे में सन् १८५६ को हुआ। आपके बचपन का नाम मुन्शीराम था, आप छह भाई-बहनों में सबसे छोटे थे। सबसे छोटा होने के कारण आप माता-पिता के भी सर्वाधिक प्रिय थे। आपका परिवार काफी शिक्षित था, आपके पूर्वजों में लाला कन्हैयालाल जी, महाराजा रणजीत सिंह जी के दरबार में वकील बनकर रहे थे। आपके पिता नानकचन्द जी, अंग्रेज प्रशासन में नगर कोतवाल थे। परिवार में धार्मिक प्रवृत्तियों के कारण आपको भी धार्मिक संस्कार जन्म से ही प्राप्त हुए। आप बाल्यकाल से ही मेधावी व प्रतिभा के धनी रहे, लेकिन आपके पिता पुलिस सेवा में थे, अत: इनका बार-बार बनारस, बदायूँ, बलियाँ, बरेली, मथुरा आदि में स्थानान्तरण होता रहा, जिससे आपके प्रारम्भिक अध्ययन में बाधाएँ आती रही। लेकिन परिवार धन आदि की दृष्टि से काफी सम्पन्न था।

इन सम्पन्नताओं और अनुकूलताओं के मध्य युवक मुन्शीराम अनेक दुर्गुणों से घिर गए। आप हुक्का, शराब

thearyasamaj.org

आदि का नशा व माँस-भक्षण तक करने लगे थे। इसके साथ-साथ आप नास्तिकता की ओर भी जाने लगे थे। जब मुन्शीराम जी सन् १८७५ ई. में बनारस में पढ़ते थे, तब इनकी दिनचर्या में प्रात: काल अखाड़े में व्यायाम करना, फिर गंगा स्नान करके काशी विश्वनाथ के मन्दिर में पूजा करना शामिल था। एक दिन मुन्शीराम दर्शन के लिए गए, गली में दोनों ओर पुलिस लगी थी, मुख्य द्वार पर पहरेदारों ने युवक मुन्शीराम को अन्दर जाने से रोक दिया। पूछने पर पता चला कि रीवाँ की रानी दर्शन कर रही है, उनके दर्शन कर लेने पर ही सामान्य व्यक्तियों के लिए मन्दिर का द्वार खुलेगा। इस घटना से मुन्शीराम अत्यन्त दु:खी, निराश व हताश हुए, मन्दिर से सीधे घर आ गए, भोजन आदि भी नहीं किया। सतत चिन्तन चलता रहा कि क्या सचमुच यह जगत्स्वामी का दरबार है, जिसमें एक रानी, उसके भक्तों को दर्शन करने से रोक देती है? क्या यह मूर्ति विश्वनाथ हो सकती है या वे देवता कहला सकते हैं, जिनके अन्दर ऐसा पक्षपात हो? यह सोचकर मुन्शीराम की हिन्दू देवी-देवताओं से आस्था समाप्त हो गई।

फिर इसी चिन्तन अवस्था में 'फादर लीफ' नामक एक क्रिश्चिन पादरी से सम्पर्क हुआ। मुन्शीराम इनके आचार-व्यवहार से अत्यन्त प्रभावित हुए। यह प्रभाव इतना अधिक था कि आपने ईसाईयत में दीक्षित होने का निश्चय कर लिया। बपतिस्मा की तिथि निश्चित करने पादरी लीफ के चर्च पहुँचे तो वहाँ पादरी दिखाई नहीं दिए, उन्हें खोजने का प्रयास किया तो अनायास उस कमरे में जा पहुँचे, जहाँ एक अन्य पादरी तथा नन परस्पर शारीरिक सुख लेने में लगे हुए थे। इस घटना ने पुन: युवक मुन्शीराम के मन से श्रद्धा का बीज उखाड़ फेका। मुस्लिम मत से किसी आध्यात्मिक तृप्ति की आशा मुन्शीराम को नहीं थी, क्योंकि पिता के कार्यालय में मुस्लिम मतावलम्बियों के आचार-व्यवहार सम्बन्धी अनेकों मुकदमों से वे परिचित थे। इस प्रकार विभिन्न मतों का चक्कर लगाकर युवक मुन्शीराम पूर्ण नास्तिक से बन गए।

अन्तत: वह सुखद संयोग आया जब महर्षि दयानन्द जी धर्म प्रचारार्थ बरेली पहुँचे। महर्षि की सुरक्षा व्यवस्था का जिम्मा नानकचन्द जी को सौंपा गया। नानकचन्द जी ने महर्षि का भाषण सुना, आप अत्यधिक प्रभावित हुए और मन में यह निश्चय कर लिया कि पुत्र मुन्शीराम के नास्तिकता की निवृत्ति महर्षि दयानन्द ही कर सकते हैं। पिता जी ने घर आकर सारी बातें बताई व अगले दिन प्रवचन सुनने के लिए चलने को कहा। मुन्शीराम ने प्रवचन में चलने की स्वीकृति तो दे दी किन्तु सोचते रहे कि एक संस्कृत पढ़ा साधु क्या बुद्धि की बातें करेगा। अगले दिन प्रवचन स्थल पर, उस दिव्य मूर्ति के दर्शन करते ही, उस तेजस्वी व्यक्ति से अत्यन्त प्रभावित हुए। फिर सभा में पादरी स्कॉट समेत १५-२० अंग्रेज पदाधिकारी भी उपस्थित थे तथा ध्यान से प्रवचन सुन रहे थे, इन दृश्यों ने भी मुन्शीराम पर गहरी छाप छोड़ी। महर्षि जी ऐसी युक्ति-युक्त बाते करते थे कि विद्वान् भी दंग रह जाते थे। महर्षि दयानन्द निर्भीकता से जहाँ पुराणों आदि की मिथ्या बातों का खण्डन किया करते थे, वहीं अंग्रेज अधिकारियों की उपस्थिति में ईसाई मत का भी खण्डन करते थे। अंग्रेज इससे चिढ़ गए, उन्होंने महर्षि को कठोर न बोलने व ईसाई आदि मत का खण्डन न करने का सन्देशा भिजवाया। लेकिन महर्षि जी ने स्पष्ट उत्तर दिया कि कलेक्टर, कमिश्नर तो क्या यदि चक्रवर्ती राजा भी मेरे सत्य कहने से अप्रसन्न होगा तो भी मैं सत्य ही कहूँगा। महर्षि दयानन्द के इन निर्भीकता आदि गुणों ने मुन्शीराम के मन में अत्यधिक प्रभाव डाला, लेकिन अभी तक मुन्शीराम को अपने नास्तिकपने पर अभिमान था। उन्होंने एक दिन ईश्वर के अस्तित्व में आक्षेप कर डाले। पाँच मिनट के प्रश्न-उत्तर में महर्षि ने मुन्शीराम को निरुत्तर कर दिया। अगले दिन मुन्शीराम फिर प्रश्नों को ले गए, लेकिन फिर महर्षि ने निरुत्तर कर दिया, तीसरे दिन फिर यही स्थिति। अत: मुन्शीराम ने महर्षि दयानन्द से कहा- 'स्वामी जी आपकी तर्क शक्ति बड़ी प्रबल है, आपने मुझे चुप तो कर दिया, परन्तु यह विश्वास नहीं दिलाया कि परमेश्वर की कोई सत्ता है।' महर्षि जी पहले हँसे, फिर गम्भीर होकर बोले- 'देखो! तुमने प्रश्न किए, मैंने उत्तर दिए, यह युक्ति की बात थी। मैंने कब प्रतिज्ञा की थी कि मैं परमेश्वर पर तुम्हारा विश्वास करा दूँगा।

चूँकि मुन्शीराम जी मेधावी थे, अत: आर्षग्रन्थों के स्वाध्याय करने से सत्य का निश्चय होने लगा। उत्तरोत्तर वे वैदिक धर्म के निकट आते गए तथा ईश्वर व वैदिक धर्म में विश्वास बढ़ता ही गया। सत्यार्थप्रकाश में महर्षि दयानन्द जी ने पठन-पाठन प्रकरण में गुरुकुलों की चर्चा की है, अत: मुन्शीराम जी ने बालकों के लिए गुरुकुल खोलने का मन बना लिया। लेकिन इस विचार को मूर्त्त रूप देना इतना आसान नहीं था- गुरुकुल स्थापना के लिए साधन, विद्यार्थी, अध्यापक आदि सभी विषयों पर शून्य से कार्य प्रारम्भ करना था। मुन्शीराम जी ने यह प्रस्ताव पंजाब आर्य

thearyasamaj.org
प्रतिनिधि सभा के सामने रखा। सभा ने मुन्शीराम जी से कहा कि पहले आप एतदर्थ तीस हजार रुपये की राशि एकत्रित करें, पुनः सभा आपके प्रस्ताव पर विचार करेगी। [यह घटना सन् १९०० ई. के आस-पास की है, पाठक उस समय के तीस हजार रुपये के मूल्य का आंकलन कर सकते हैं।] लेकिन अपनी धुन के धनी मुन्शीराम जी ने यह कठिन कार्य अल्प समय में ही कर दिखाया। पुनः सन् १९०२ ई. में गंगा के तट पर, हरिद्वार के निकट कांगड़ी ग्राम में गुरुकुल की स्थापना की गई। मुन्शीराम जी ने अपने दोनों बालकों को भी विद्यार्थी के रूप में गुरुकुल में प्रवेश कराया। धीरे-धीरे मुन्शीराम जी की तपस्या से गुरुकुल चल पड़ा, अब मुन्शीराम 'महात्मा मुन्शीराम' बन चुके थे। कुछ ही समय में गुरुकुल की गूंज भारत के साथ-साथ ब्रिटेन तक पहुँची, और ब्रिटिश प्रधानमन्त्री जैसी बड़ी हस्तियाँ भी इस अनोखी शिक्षा पद्धति का अध्ययन करने गुरुकुल पहुँचे। महात्मा मुन्शीराम अत्यन्त सरलता व सहजता से गुरुकुल का संचालन कर रहे थे, वे प्रतिदिन गुरुकुल के छात्रावासों के कई चक्कर लगाते। एक समय भ्रमण करते समय देखा कि एक विद्यार्थी बीमार है, गुरुकुलीय परम्परा में किसी छात्र के बीमार होने पर, किसी अन्य छात्र को उसकी सेवा में नियुक्त किया जाता था, लेकिन उस समय सेवा में नियुक्त छात्र वहाँ आस-पास नहीं था तथा बीमार छात्र को उल्टी आने लगी। उल्टी से विद्यार्थी का बिस्तर खराब न हो और आस-पास कोई पात्र न पाने पर महात्मा मुन्शीराम ने अपने दोनों हाथों में छात्र की उल्टी ले ली। ऐसे अनेकों संस्मरण तत्कालीन विद्यार्थी महात्मा जी के विषय में बताते हैं। जिससे महात्मा जी के दया, करुणा, सत्यनिष्ठा आदि भावों की गहराई का पता चलता है। गुरुकुल कांगड़ी की ही भाँति आपने गुरुकुल कुरुक्षेत्र, गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ, गुरुकुल सूपा, गुरुकुल मुल्तान की भी स्थापना की। बालिकाओं के लिए कन्या विद्यालय जालन्धर जैसी संस्थाएँ स्थापित की।

इन कार्यों के बीच आपने संन्यास दीक्षा ग्रहण करने का मन बना लिया, संन्यास ग्रहण कर आप मुन्शीराम से स्वामी श्रद्धानन्द कहलाए। आपकी तत्कालीन राजनीतिक पैठ का इस बात से ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि सन् १९१९ ई. के अमृतसर के कांग्रेस अधिवेशन में आपको 'स्वागताध्यक्ष' बनाया गया और आपने साहस का परिचय देते हुए अधिवेशन के इतिहास में पहली बार स्वागत भाषण हिन्दी में पढ़ा। जब आप रोलेक्ट एक्ट का विरोध करते हुए चाँदनी चौक, दिल्ली की सड़क पर प्रदर्शनकारियों का नेतृत्व कर रहे थे, तब अंग्रेज सिपाहियों ने आपको आगे न बढ़ने की चेतावनी देते हुए, आप पर बन्दुकें तान दी थी, लेकिन निर्भीक संन्यासी को ये बन्दूकें क्या डरा सकती थी, स्वामी जी ने अपनी छाती आगे कर कहा चलाओ गोली। इस वीरता के आगे अंग्रेजों को भी झुकना पड़ा, स्वामी जी को शान्तिपूर्ण आन्दोलन करने दिया गया।

आपकी नेतृत्व क्षमता का अन्दाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि आप ऐसे पहले हिन्दू नेता थे, जिन्हें दिल्ली की जामा मस्जिद से भाषण देने के लिए बुलाया गया और इतिहास साक्षी है कि आपने इस ऐतिहासिक मस्जिद में पवित्र वेदमन्त्र के माध्यम से अपना वक्तव्य शुरु किया।

स्वामी जी ने विधर्मी बने अपने भाईयों को पुनः शुद्ध कर वैदिक धर्म में लाने का काम शुरु किया। इस बात पर कांग्रेस के कई तथाकथित असम्प्रदायिक नेताओं को आपत्ति थी अतः आपको कांग्रेस व शुद्धिकार्य में से एक को चुनने को कहा गया। आपने सहर्ष शुद्धि कार्य को चुना और इन्हीं कार्यों की वजह से आप विधर्मियों के शत्रु बने और अन्ततः आपकी हत्या की गई।

इस प्रकार अपना सर्वस्व न्यौछावर कर स्वामी जी आर्य इतिहास में अमर हो गए। स्वामी जी का यह बलिदान तभी सार्थक होगा, जब हम भी उनकी भाँति अपने जीवन का विकास करें और सच्चे वैदिक-धर्मानुयायी बने।

(२) प्रचार कार्यक्रम- १० से १८ दिसम्बर २०१४ के मध्य परोपकारिणी सभा, अजमेर व आर्य समाज छिन्दवाड़ा के संयुक्त तत्त्वावधान में छिन्दवाड़ा (म.प्र.) के विभिन्न ग्रामों में १० दिवसीय प्रचार कार्यक्रम आयोजित किया गया। इसके अन्तर्गत आर्य भजनोपदेशक **पं. भूपेन्द्र जी, लेखराज जी शर्मा व आचार्य सत्यप्रिय जी** ने शहर तथा साले-छिन्दी, माताखेडी, मोहगाँव, नवेगाँव आदि ग्रामों में घूम-घूमकर प्रचार किया। इन कार्यक्रमों में विशेषकर गाँवों की, सभाओं में श्रोताओं ने काफी अधिक संख्या में जिज्ञासा पूर्वक भाग लिया। कार्यक्रम की रूपरेखा आचार्य सत्यप्रिय जी ने तैयार की थी। इति।।

जैसे विद्वान् लोग ईश्वर की सृष्टि में विद्या से पदार्थों की परीक्षा करके कार्य्यों में उपयोग कर सुखों को प्राप्त करते हैं वैसे ही सब मनुष्यों को इस यज्ञ का अनुष्ठान कर सब सुखों को पहुँचाना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.२२

thearyasamaj.org

आर्यजगत् के समाचार

१. वैदिक सत्संग सम्पन्न- निम्बाहेड़ा आर्यसमाज के तत्त्वावधान व आचार्य कर्मवीर मेधार्थी के नेतृत्त्व में राजस्थान के चित्तौड़गढ़ जिले के निम्बाहेड़ा नगर के पास स्थित पाँच गाँवों गादोला, मरजीवी, भगवानपुरा, बसेड़ा व जीवनपुरा में वैदिक सत्संग व भजनोपदेश का ९ दिवसीय कार्यक्रम १७ दिसम्बर २०१४ को सम्पन्न हुआ। इसमें चण्डीगढ़ के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् व भजनोपदेशक पं. उपेन्द्र आर्य, सहारनपुर के भजनोपदेशक विनोद दधिची व अलीगढ़ के सुभाष आर्य ने अपनी प्रस्तुतियाँ दी।

२. जयन्ती मनाई- आर्यसमाज, रामनगर, रुड़की, हरिद्वार, उत्तराखण्ड में देश के उच्च एवं महान नेता, निड़र, लौहपुरुष, श्री सरदार वल्लभभाई पटेल का जन्म दिवस दि. ३१/१०/२०१४ को स्वातिक महायज्ञ के साथ बड़े उत्साह पूर्वक मनाया गया।

३. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज मन्दिर अन्धेरी (पं.) मुम्बई का २८वाँ वार्षिकोत्सव समारोह दि. २५ से २८ दिसम्बर २०१४ तक मनाया गया। इस अवसर पर विश्व शान्ति एवं पर्यावरण की शुद्धि के लिए २१ कुण्डीय चतुर्वेद शतक महायज्ञ का आयोजन किया गया है। इस यज्ञ के ब्रह्मा गुरुकुल एटा के प्रधानाचार्य आचार्य श्री वागीश शर्मा जी थे। आर्ष कन्या गुरुकुल चोटीपुरा उत्तर प्रदेश से गुरुकुल की वेदपाठी छात्राएँ पधारी। मुम्बई जैसे महानगर में वेदपाठ सुनने का अवसर दुर्लभ से प्राप्त हुआ। सुप्रसिद्ध सुमधुर गायक श्री प्रभाकर शर्मा के भक्ति संगीत का आनन्द श्रोताओं ने उठाया है।

४. वार्षिक उत्सव मनाया- आर्यसमाज सैक्टर-९, पंचकूला का २८वाँ वार्षिक उत्सव १ से ७ दिसम्बर २०१४ तक डॉ. धर्मवीर-अजमेर के मार्गदर्शन में आयोजित किया गया। इसके अतिरिक्त आचार्य डॉ. प्रशस्य मिश्र शास्त्री-रायबरेली से, डॉ. विक्रम विवेकी-चण्डीगढ़ से, श्री कृपालसिंह वर्मा-मेरठ से, डॉ. सुश्रुत सामश्रमी-पानीपत से भी पधारे। पं. कपिल देव संगीतज्ञ भजनोपदेशक भी पधारे। बच्चों की धर्म शिक्षा परीक्षा, निबन्ध प्रतियोगिता, देवयज्ञ प्रतियोगिता, शुद्ध मन्त्रोच्चारण प्रतियोगिता, भाषण प्रतियोगिता और समूहगान प्रतियोगिता के आयोजन में विशेष आकर्षण रहा। इन सभी प्रतियोगिताओं में चण्डीगढ़ एवं पंचकूला के विभिन्न स्कूलों के ६०० बच्चों ने भाग लिया। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वाली समूह को प्रोत्साहानार्थ नकद राशि, स्मृति चिह्न व साहित्य पारितोषिक के रूप में दिया गया। सम्बन्धित समूह के अध्यापक को भी नकद राशि व स्मृति चिह्न सम्मानार्थ दिये। ये प्रतियोगिताएँ वैदिक सिद्धान्त व संस्कृति के संस्कारों से बच्चों को अलंकृत करने के उद्देश्य से की जाती है। आर्यसमाज द्वारा ८० साल से अधिक आयु प्राप्त कर चुके ७ सदस्यों को एक-एक शॉल, स्मृति चिह्न और फूलों का गुलदस्ता देकर सम्मानित किया गया और विशेष सेवा के लिए चार आर्य सदस्यों को भी सम्मानित किया गया।

वैवाहिक

५. वधू चाहिये- आर्य युवक, उम्र ४० वर्ष, कद-५.६ फीट, वर्ण-गेहुंआँ, सरकारी अध्यापक, एम.एस.सी. भौतिक विज्ञान, एम.ए, सामाजिक विज्ञान, बी.एड़, तलाकशुदा, ६ वर्षीय बालिका सहित, पश्चिमी उ.प्र. के लिए आर्यसमाजी परिवार की, अध्यात्म में रुचि रखने वाली, वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार जीवन जीने की इच्छुक, घरेलू कन्या चाहिए।-**सम्पर्क-** ०९९९७२२१६७५

६. वर चाहिये- आर्यसमाज परिवार व प्रतिष्ठित व्यवसायी परिवार की सुन्दर, संस्कारित पुत्री जन्म अक्टूबर १९९१, कद-५ फीट ३ इंच, वर्ण-गौरवर्ण, शिक्षा-बी.टेक, एम.बी.ए., निवासी राजस्थान के लिए आर्यसमाजी परिवार का वर चाहिए।-**सम्पर्क-०७०२३८५६६११**

ई-मेल - ndhswa@gmail.com

७. वधू चाहिये- आर्यवन, रोजड़ और ऋषि उद्यान, अजमेर से जुड़े हुए युवक चिन्तन रामी, उम्र ३० साल, कद-५.९ फीट, वर्ण-गेहुंआँ, शिक्षा-एम.बी.ए., व्यापार-प्रॉपर्टी लेन-देन, निवास-जजेज बंगलो रोड, अहमदाबाद-३८००१५ (गुज.) के लिए आर्यसमाजी परिवार की, अध्यात्म में रुचि रखने वाली, वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार जीवन जीने की इच्छुक, घरेलू कन्या चाहिए।-**सम्पर्क-०९८२४९०८०८५**

ईमेल-chintan_success1@yahoo.co.in

चुनाव समाचार

८. आर्यसमाज कृष्णपोल बाजार, जयपुर, राज. के चुनाव में **प्रधान-** श्री ओ.पी. वर्मा, **मन्त्री-** श्री कमलेश शर्मा, **कोषाध्यक्ष-** श्री दिनेशचन्द शर्मा को चुना गया।

thearyasamaj.org

आचार्य कर्मवीर एवं ब्र. प्रभाकर की अण्डमान-निकोबार प्रचार यात्रा।

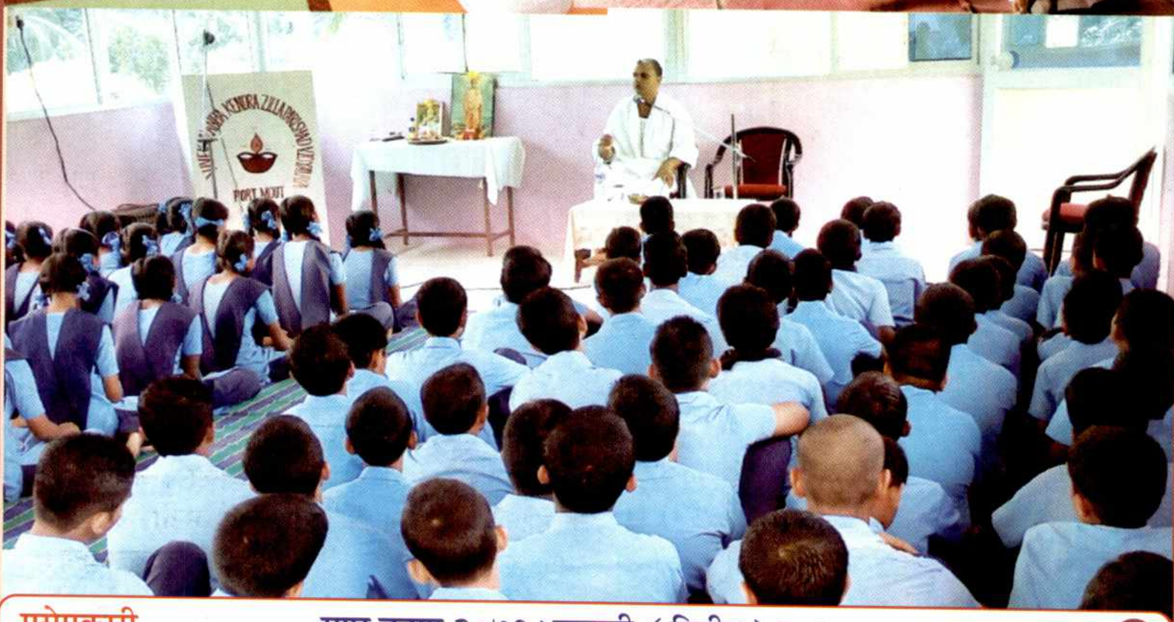

thearyasamaj.org

आर जे/ए जे/80/2015-2017 तक प्रेषण : १५ जनवरी , २०१५ ३९५९/५९

सेठ निर्भयराम (प्रधान आर्यसमाज फर्रूखाबाद)
बिसाऊ (राज.)

सेठ निर्भयराम मूलत: शेखावटी (राजस्थान) के बिसाऊ ठिकाने के निवासी थे। आपका व्यवसाय फर्रूखाबाद में था। स्वामी जी के विश्वासपात्र वणिक् भक्तों में सेठ जी का प्रमुख स्थान था। लोकोपकार हेतु जो द्रव्य श्री महाराज की भेंट रूप में प्राप्त होता, वह सेठ जी के यहाँ ही जमा रहता। दयानन्द आश्रम के निर्माण हेतु आपने एक हजार रुपए प्रदान किए तथा वेद भाष्य सहायता निधि में भी उतने ही रुपये दिये। फर्रूखाबाद में वैदिक पाठशाला की स्थापना स्वामी जी के परामर्शानुसार आपने ही की। इस पाठशाला में स्वामी जी के सतीर्थ्य पं. उदयप्रकाश अध्यापन कार्य करते थे। पं. भीमसेन और पं. ज्वालादत्त, जो पर्याप्त समय तक स्वामी जी के साथ रहकर ग्रन्थ लेखन का कार्य करते रहे, इसी पाठशाला के छात्र रह चुके थे। इनकी पढ़ाई का व्यय भी सेठ निर्भयराम ने ही दिया था। वैशाख शुक्ल ४ सं. १९९६ वि. को ६४ वर्ष की आयु में सेठ जी परलोकगामी हुये।

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर
(राजस्थान) - ३०५००१

Design@ MITTAT 9829797513